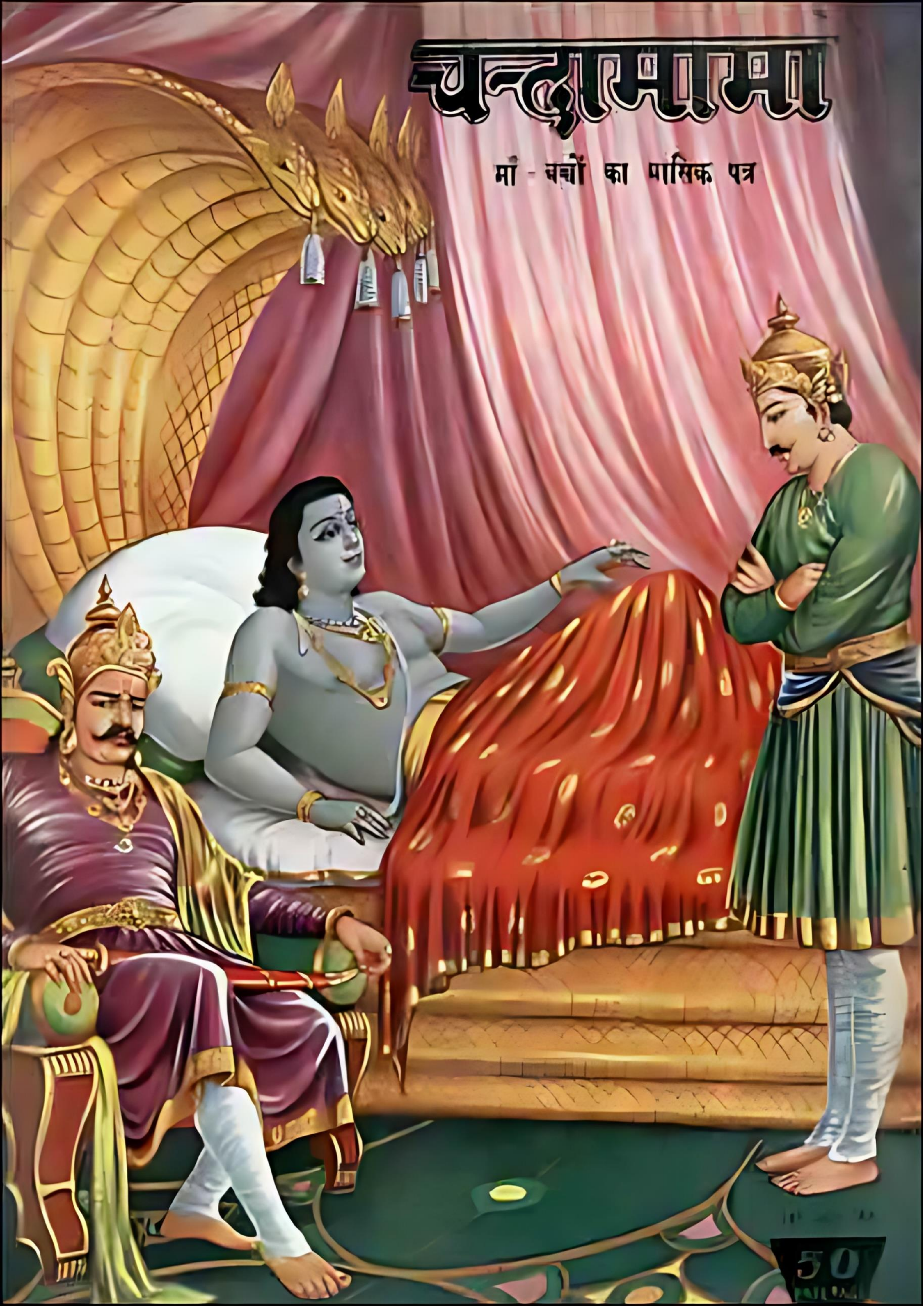
चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र
50

रामपुर नाम के गाँव में बीरसिंह नाम का किसान रहा करता था। वह बचत से रह कर अपनी जमीन जायदाद बढ़ाता आया था। उसका एक लड़का था, जिसका नाम रघू था। रघू की शादी के लायक उम्र हो गई थी। दहेज में उसे जो कुछ मिलेगा उसमें अपनी बचत का रुपया मिलाकर बीरसिंह जमीन खरीदने की सोच रहा था। परन्तु रघू अभी शादी के बारे में नहीं सोच रहा था।

एक त्यौहार आया। मेला देखने के लिए गाँव के मजदूर तक जा रहे थे। रघू भी मेला देखने निकला। जब वह अपने जवार के खेत के पास आया तो उसको लक्ष्मी नाम की लड़की खेत में दिखाई दी।

लक्ष्मी का पिता कभी समृद्ध था। परन्तु भाग्य ने उसका साथ न दिया, कर्ज बढ़ गया। जो कुछ था खो बैठा। वह बुरी हालत में मरा। लक्ष्मी की माँ उससे पहले ही मर गई थी, अनाथ लक्ष्मी को दादी ने पाला पोसा था। अब उसकी दादी बहुत बूढ़ी हो गई थी। वह न ठीक तरह देख पाती थी न सुन ही पाती थी। लक्ष्मी मेहनत करके अपना पेट भरती। और बूढ़ी को भी खिलाती। दोनों एक झोंपड़े में रहा करते थे।

लक्ष्मी को देखकर रघु ने पूछा-"क्यों लक्ष्मी, सब मेले में जा रहे हैं और तू काम कर रही है?"

"अगर जा सकूँ तो में क्यों नहीं जाऊँगी?" लक्ष्मी ने पूछा।

"निहलाई के लिए मेरे पिता जी तुझे कितना दे रहे हैं?" रघू ने पूछा।

"दो आने।" लक्ष्मी ने कहा।

"केवल दो आने ही, जा, मैं दूँगा। मेला देख आ।" रघू ने कहा।

"मुझे नहीं चाहिए। सिर्फ क्या पैसे की ही बात है? मुझे काम भी तो करना है।" लक्ष्मी ने पूछा।

रघू कुछ न बोला। कुर्ता उतारकर वह भी खेत में एक तरफ़ से निहलाई करने लगा। निहलाई का काम तो हो गया। पर काम की आदत न होने से वह थक गया। उसके मुँह पर पसीना आ गया। लक्ष्मी ने उसका मजाक किया। "तूने क्योंकि मेरा काम कर दिया है इसलिए हमारे घर आ, गुड़ का शरबत पिलाऊँगी।"

रघू, लक्ष्मी के साथ उसके घर गया। उसने उससे पहले कभी झोंपड़े में पैर न रखा था। झोंपड़ा गरीबों का था। पर वह आईने की तरह साफ था। लक्ष्मी की दादी बहुत चिड़चिड़े स्वभाव की थी। "न मालूम लक्ष्मी इस बुढ़िया के साथ कितने सब्र से रह रही है।" रघू ने सोचा।

लक्ष्मी ने रघू को गुड़ का शरबत पीने को दिया। रघू वहाँ से घर की ओर चल पड़ा। जब वह अपने पशुओं के घर के पास गया तो उसका पिता बीरसिंह मेंढ़ ठीक कर रहा था।

उसने अपने लड़के को देखकर कहा-"अरे रघू थोड़ा हाथ तो लगा। काम करनेवाले सब मेले में चले गये हैं। यह मेंढ़ ठीक करनी है और कम्बख्त एक भी नहीं दिखाई देता। इसलिए मुझे खुद ठीक करनी पड़ रही है।"

रघू पिता की मदद करने लगा। लड़के को अन्यमनस्क देखकर वीरसिंह ने पूछा-"क्यों भाई, क्या सोच रहे हो?"

"कुछ नहीं पिताजी। शादी करने के लिए आप और माँ बहुत दिनों से कह रहे हैं। परन्तु क्योंकि अभी तक ठीक लड़की न मिली थी इसलिए मैंने कुछ न कहा था। पिताजी, अब मुझे मेरे लायक लड़की मिल गई है।"

"वह लड़की कौन-सी है?" पिता ने पूछा।

"लक्ष्मी।" रघू ने कहा।

"हमारे घर कभी कभी काम पर आया करती है, वही न?" वीरसिंह ने पूछा।

"हाँ, वही मेरे लायक पत्नी है।" रघू ने कहा।

वीरसिंह ने कुछ देर सोचकर कहा-"कभी उनकी हालत भी हमारी तरह अच्छी थी। यही नहीं लक्ष्मी अक्लमन्द भी है। परन्तु वे अब कतई गरीब हैं।"

"उनकी जमीन-जायदाद से हमें क्या मतलब है? वह अकलमन्द है, मेहनती है। खूबसूरत भी है।" रघू ने कहा।

"हाँ, अगर कोई मुझसे पूछे तो मैं जरूर शादी करने के लिए कहूँगा। परन्तु तुम्हारी माँ बड़ी कञ्जूस है।

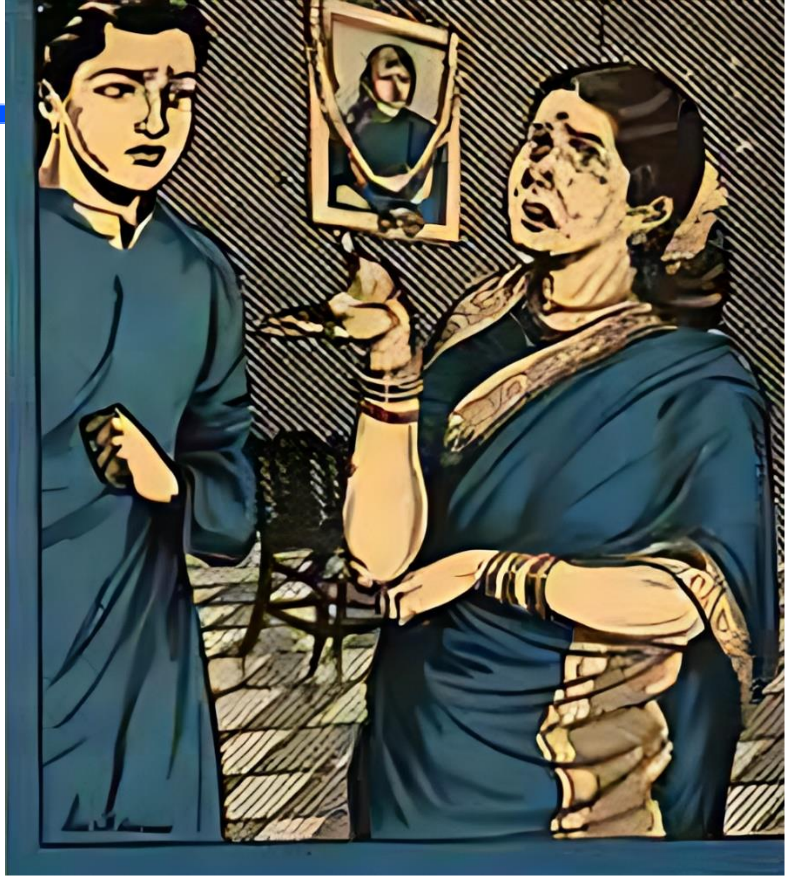

दूध, दही, घी बेचकर जितना कमाती है उसे मुझे दिखाती तक नहीं। जाने वह सब कहाँ रख देती है। वह यह शादी बिल्कुल नहीं मानेगी।" बीरसिंह ने कहा।

उसी दिन रघू ने अपनी माँ से भी शादी के बारे में कहा। उसने सब सुनकर कहा-"अगर तू लक्ष्मी से शादी करना चाहे तो क्या मैं रोकूँगी? पर तू तो जानता ही है तुम्हारा पिता कितना कञ्जूस है। अगर बिना दहेज के तूने एक गरीब लड़की से शादी करने की सोची तो वे बिल्कुल न मानेंगे।"

उसके बाद वीरसिंह ने पत्नी के साथ कुछ तय कर लिया। बीरसिंह की पत्नी

के भाई की एक लड़की थी। नाम था दुर्गा। कभी उन्होंने रघू की उससे शादी करने की सोची थी। दुर्गा के पास पाँच छः सौ रुपये की सम्पत्ति थी। वह इस समय कस्बे में रह रही थी। वीरसिंह और उसकी पत्नी ने सोचा यदि दुर्गा को एक महीने घर लाकर रखा तो रघू का दिल लक्ष्मी से हटकर दुर्गा पर लग जायेगा।

वीरसिंह किसी बहाने कस्बा गया और दुर्गा को गाड़ी में ले आया। दुर्गा में सौन्दर्य की अपेक्षा आडम्बर अधिक था। बुद्धि की अपेक्षा अहङ्कार अधिक था।

सम्पत्ति यद्यपि पाँच छः सौ रुपये की थी पर चलती लखपति की तरह थी। जब से वह आई थी उसने एक चीज़ उठाकर इधर से उधर न रखी। जहाँ वह बैठती कूड़ा करकट जमा कर देती। अपना काम भी दूसरों को सौंप देती। गाँव में उसे कुछ सूझ नहीं रहा था। दिन रात बकवास किया करती। किसी को काम न करने देती।

रघू से उसकी माँ ने कहा - "बेटा, दुर्गा कस्बे में पली है। इसलिए वहाँ की कुछ आदतें आ गई हैं। वैसे उसका मन

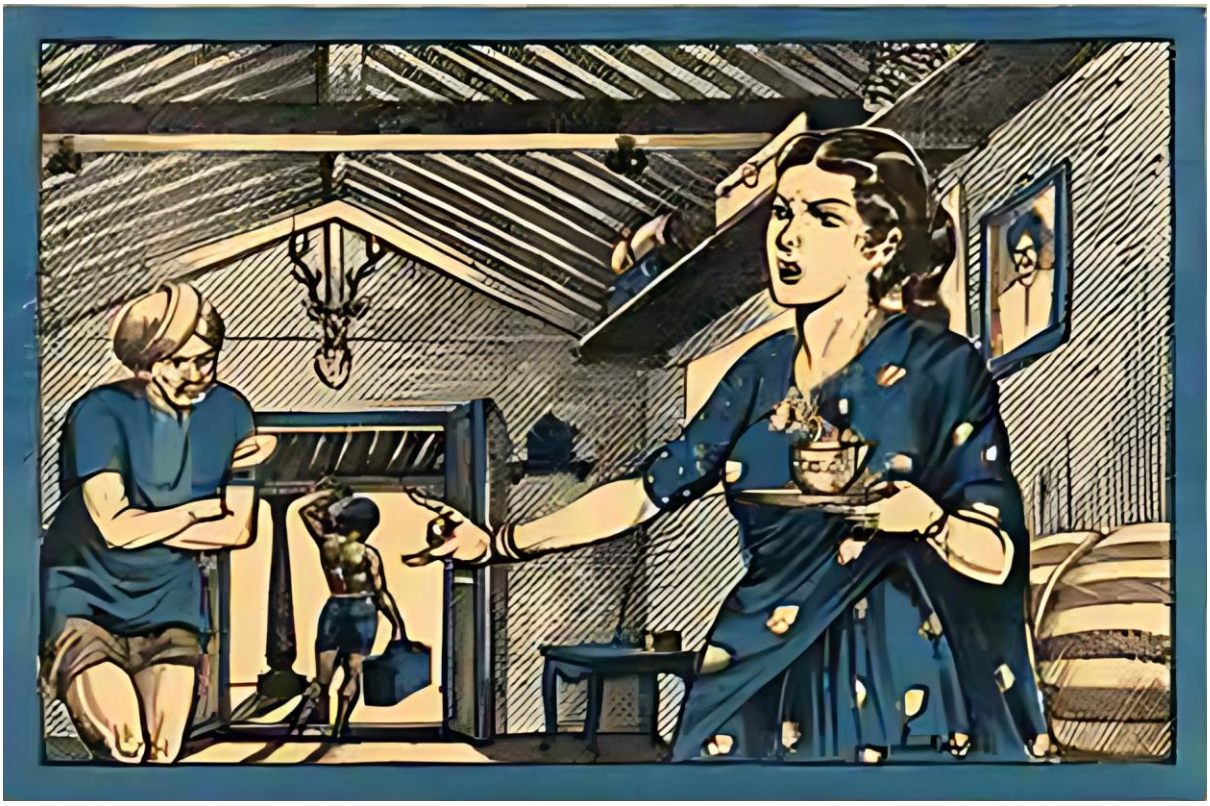

अच्छा है। अगर वह तेरी स्त्री बन गई तो पाँच सौ रुपये की सम्पत्ति भी साथ लायेगी। तुम्हारा पिता बड़ा खुश होगा। उसे तुम खुश करने की कोशिश करो।"

"बहुत अच्छा, माँ।" रघु ने कहा।

परन्तु दुर्गा का व्यवहार दिन प्रति दिन बिगड़ता गया। घर के दो नौकरों ने काम छोड़ दिया क्योंकि दुर्गा ने उनको बुरी तरह डरा धमका दिया था। गाय बीमार पड़ी, उसे देखने भालनेवाला कोई न था। वीरसिंह ने लड़के से कहा-"जरा गौ पर नज़र रखना।"

"पिताजी, मैं कम्बा जा रहा हूँ। दुर्गा को कुछ चीजें चाहिये।" रघू ने कहा।

वीरसिंह की पत्नी न सोच पाई कि क्या किया जाये। दो-चार दिन लक्ष्मी को सहायता करने के लिए बुलाया। मगर मालूम हुआ कि लक्ष्मी की दादी को पक्षपात हो गया था और लक्ष्मी इसलिए न आ सकती थी।

रघू कस्बा गया और दस रुपये खराब करके दुर्गा के लिए चीजे ले आया।

उसी दिन वीरसिंह और पत्नी ने आपस में फिर बातचीत की।

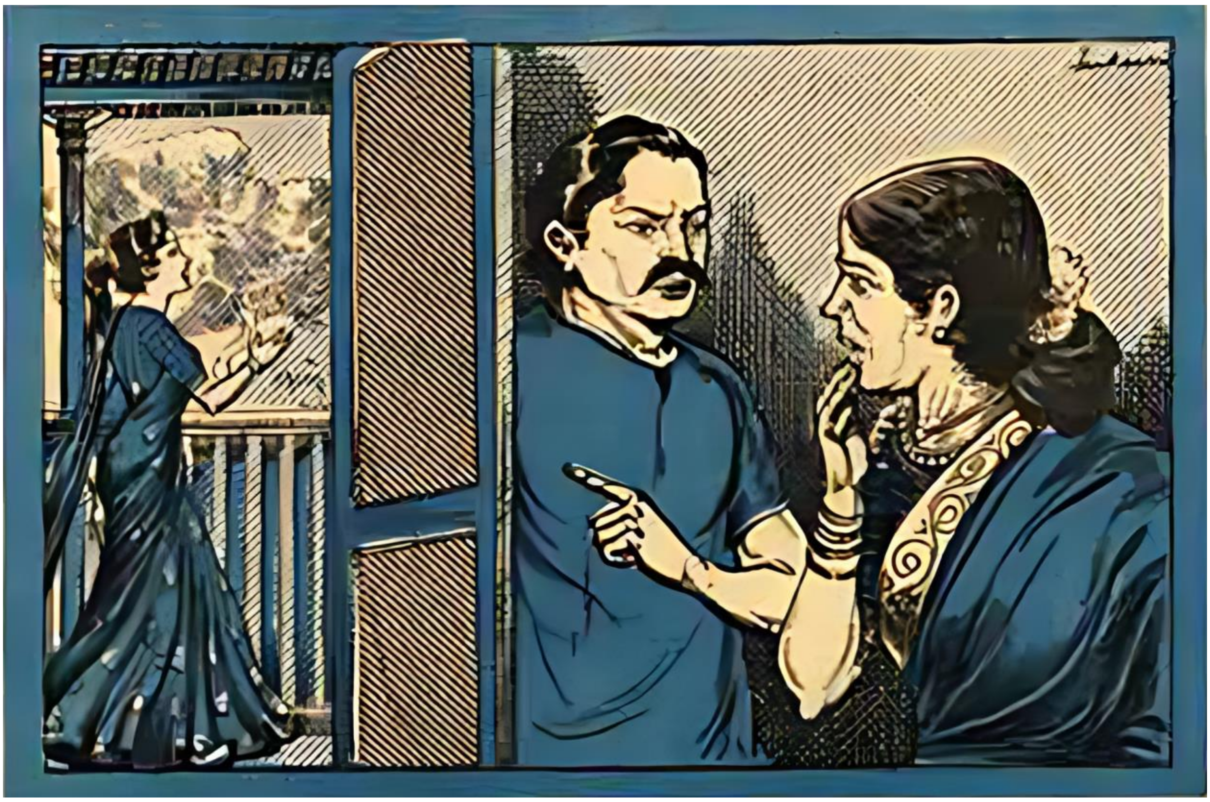

"जब से दुर्गा आई है सब उलटा हो रहा है। बिल्कुल आलसी है। मुझे इस तरह देखती है जैसे में उससे वेतन पाती हूँ। जाने कितनी ही चीजें तोड़ डाली हैं। अच्छा घर नरक-सा हो गया है। मैं तो पागल सी हो गई हूँ।" पत्नी ने कहा।

"क्या यह एक ही बात है? हमारा रघू भी उसका गुलाम हो गया है। उसका दहेज लाना तो अलग- उससे दस गुना हमसे खर्च करवायेगी।" वीरसिंह ने कहा। दोनों ने मिलकर दुर्गा को वापस भेजने की सोची। वीरसिंह कोई बहाना करके कस्बा गया और साथ दुर्गा को भी ले गया।

उसी दिन वीरसिंह की पत्नी लक्ष्मी के घर गई। "जब तुम्हारी दादी इस हालत में है, तुम्हें बुलाना अच्छा नहीं है। तुम दोनों हमारे घर आकर रहो। मैं बिना किसी की सहायता से रह नहीं सकती। तुम्हारी दादी के लिए जो कुछ चाहिये, मैं इन्तज़ाम कर दूँगी।"

उसी दिन लक्ष्मी अपनी दादी के साथ वीरसिंह के घर चली गई। लक्ष्मी का घर में पैर रखना था कि घर में पहले की तरह चैन आ गई। घर ठीक रखने में लक्ष्मी बहुत चतुर थी।

कुछ दिन बाद वीरसिंह ने रघु से कहा-"कभी कहा था कि लक्ष्मी से शादी करोगे। क्या अब भी शादी करना चाहते हो?"

"मैं हमेशा उससे ही शादी करना चाहता था। आपने ही इस बीच इधर उधर की करनी शुरू कर दी थी।" रघु ने कहा।

उसके कुछ दिनों बाद लक्ष्मी की रघू से शादी हो गई। सब सुख से रहने लगे।

[१८]

[पिङ्गल जब अवन्तीनगर पहुँचा तो माता से उसको अपने भाइयों को दुस्थिति के बारे में मालूम हुआ। तुरन्त उसने भल्लूककेतु को भेजकर राजा के खजाने का धन, जादू वाली थैली मँगवाई और भाइयों को भी छुड़वा कर घर बुलवाया। उसके बाद पिङ्गल की आज्ञा पर भल्लूककेतु एक अपूर्व महल बनाने को तैयारियाँ करने लगा। उसके बाद :]

भल्लूककेतु अपने साथियों को लेकर अन्धेरा होने से पहले अवन्तीनगर वापस आ गया। उसकी देखरेख में नदी के किनारे महल बनने लगा। हजारों पिशाच, मजदूर आदि, नींव खोदकर एक विशाल महल बनाने लगे।

नदी के किनारे इन लोगों का हो-हल्ला सुन कर अवन्तीनगर के पहरेदारों ने वहाँ जाकर जानना चाहा कि क्या हो रहा था।

इस तरह आये हुये कई लोगों को भल्लूककेतु के आदमियों ने महल बनाने के काम में लगा दिया। तलवार, भाले लेकर दो राजसैनिक आये। उनको भी उन्होंने मार पीट कर भगा दिया।

सूर्योदय से पहले ही महल तैयार हो गया। पिङ्गल ने अपनी माँ और भाइयों को लेकर उसमें प्रवेश किया। प्रात:कालीन सूर्य की कान्ति में वह महल सोने की

पिशाच थे तो उसने उन बातों पर विश्वास करना उचित न समझा क्योंकि कभी ऐसी बात न सुनी गई थी।

"अरे भाई, इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। तुझे शराब के नशे के कारण भूत दिखाई दिये होंगे। अब घर जाकर आराम करो। राजा को यदि खबर मिली तो तुझे कैद भुगतनी पड़ेगी।" मन्त्री ने कहा।

तरह चमक रहा था। पिङ्गल ने भल्लूककेतु के पिशाचों में से पचास को पहरे के लिए रखकर बाकी को भल्लूक पर्वत वापस भेज दिया। भल्लूककेतु ने चार दिवारी में लोहे के सीखचों वाले फाटक को खोला। फिर वह फाटक के पास पत्थर की कुर्सी पर पहरेदार की तरह बैठ गया।

तब तक अवन्तीनगर के राजमहल में तहलका मच गया था। एक सैनिक, जो महल बनता देखने गया था और पिट-पिटाकर वापिस आया था मन्त्री के पास जाकर रोया धोया। जब मन्त्री को यह मालूम हुआ कि वहाँ काम करनेवाले भूत

"नहीं, महामन्त्री! अब भी कई हमारे सैनिकों को उन्होंने पकड़ रखा है। इन पिशाचों से पिट-पिटाकर भाग कर आनेवालों में मैं अकेला ही नहीं हूँ। और क्या कहूँ? आप किले के बुर्ज पर खड़े हो कर देखिये, नदी के किनारे वह महल आपको भी दिखाई देगा।" पहरेदारों के सरदार ने कहा।

मन्त्री ने बुर्ज पर चढ़कर देखा। सामने, नदी के किनारे, सूर्य की रोशनी में एक विचित्र महल चमचमा रहा था। उसके आश्चर्य की सीमा न रही। "यह क्या आश्चर्य है?" सोचता सोचता वह बुर्ज से नीचे उतर ही रहा था कि खजाञ्ची ने

रोते धोते कहा-"महामन्त्री! सत्यनाश हो गया। खजाने में एक कौड़ी भी नहीं छोड़ी, सब चोर उठा ले गये। क्या आफत है!" उसने कहा।

"खजाने में चोरी हो गई है? पहरेदार कहाँ गये थे? उन्हें तुरन्त यहाँ पकड़ कर लाओ।" मन्त्री ने काँपते हुये जोर से कहा।

"पहरेदारों की कोई गलती नहीं है। खजाने के दरवाजे जैसे बन्द थे वैसे अब भी बन्द हैं। उनके ताले भी ठीक हैं। सब माया सी मालूम होती है।" खजाञ्ची ने आकाश की ओर देखते हुये कहा।

"सब माया है?" महामन्त्री ने गुस्से में गरजते हुये कहा-"इस माया की सजा क्या होगी, जानते हो? फाँसी। चलो, राजा के पास चलें।"

मन्त्री, खजाञ्ची, जब राजा के कमरे के पास पहुँचे तो जेल का अधिकारी वहाँ घबराता हुआ आया। उसने कहा-"महामन्त्री! बड़ी आफत आगई है। जीवदत्त और लक्षदत्त गायब हैं।"

यह सुन मन्त्री की मानों अक्ल ही जाती रही। उसने जेल के अधिकारी से पूछा-"ये जीवदत्त और लक्षदत्त

क्या कोई देवता हैं? वे कैसे गायब हो गये?"

"उनकी कोठरी में सिर्फ एक बोरा है। उतना बड़ा बोरा कोई आदमी नहीं बना सकता है। उसे किसी राक्षस ने अथवा देवता ने ही बनाया होगा।" जेल के अधिकारी ने कहा।

मन्त्री सोचने लगा। नदी के किनारे बनता महल, सैनिक की बातें, राजमहल में हुई करामातों के बारे में सोचते हुये मन्त्री को एक बात साफ़ हो गई कि वे किसी मनुष्य के कारनामें नहीं थे। कैद से गये

रसोई में काम करनेवाले नौकर हाथ बाँधे खड़े थे।

मन्त्री के आते ही राजा ने उसकी ओर मुड़ कर कहा-"मन्त्री। इन सब को बाँधकर हाथियों से कुचलवा दो। दुष्टों ने मेरी जादूवाली थैली चुरा ली है।"

"महाराज! और भी कई आश्चर्यजनक बातें हुई हैं।" यह कहकर मन्त्री ने सारी बातें उसे सुना दीं। राजा ने क्रुद्ध होकर कहा-"तुरन्त पचास सैनिकों को लेकर उस महल में जाओ और वहाँ के सब आदमियों को बाधकर लाओ।" राजा ने आज्ञा दी।

"महाराज! सावधानी से सोचिये।" मन्त्री कुछ कहने वाला ही था कि राजा ने गुस्से में कहा-"तुम उस मछियारे को राज्य सौंपकर मन्त्री बने रहने की सोच रहे हो क्या?"

मन्त्री कोई जवाब न दे सका। उसी समय प्रासाद-रक्षक ने आकर पूछा-"क्या आपकी यह आशा है कि उस मछियारे पिङ्गल को घोड़े पर बाँधकर घसीट कर लाऊँ?"

हुये जीवदत्त और लक्षदत्त का एक जादूगर भाई था, जिसका नाम पिङ्गल था। यह मन्त्री ने पहले भी सुन रखा था।

"अच्छा, जो कुछ हुआ है, उसके बारे में राजा को भी सूचना दी जाये। जादूगर पिङ्गल अब इस शहर में फिर वापस आ गया होगा।" मन्त्री ने सोचते हुये कहा।

जब राजा के कमरे में गये तो वहाँ भी हो हल्ला हो रहा था। "सच बताओ, तुम सबको फाँसी पर चढ़ाऊँगा। मेरी जादू की थैली कहाँ है?" राजा तिलमिलाता पूछ रहा था। उसके सामने राजमहल की

"उसे तुम घोड़े से बाँधकर घसीटकर लाओ या गधे से बाँधकर, दोनों मेरे लिये बराबर हैं। मुझे चाहिये जादू की थैली और खजाने से गया हुआ धन। समझे? अब जाओ।" राजा ने गुस्से में उससे कहा।

प्रासाद-रक्षक, सशस्त्र पचास सैनिकों को लेकर पिङ्गल के महल के पास पहुँचा। चार दिवारी के पास, पत्थर की कुर्सी पर ऊँघते भल्लूककेतु को देखकर सैनिक घबरा गये। उन्होंने अपने सरदार से कहा-"यह तो कोई राक्षस मालूम होता है। उसके वे कान देखिये, हाथी के कान से लगते हैं। दान्त जङ्गली सूअर के से हैं।"

प्रासाद-रक्षक ने अट्टहास करके कहा-"अरे नादानों! डरो मत। यह कोई हमें डराने के लिए यो वेष बनाये हुए है।" फिर उसने घोड़े को ऐंड लगाई। भल्लूककेतु के पास जाकर उसके हाथ में भाला मारते हुए कहा-"अरे घमंडी, आँखें खोल। प्रासाद-रक्षक आये हैं।"

भल्लूककेतु ने आँखें खोली। अपने हाथ में से भाला निकाल कर उससे प्रासाद रक्षक के पेट में भौंका। उसके दोनों पैरों को पकड़ कर, घुमा-घुमाकर नदी में फेंक दिया।

यह दृश्य देखते ही सैनिक हाय-हाय करते, सिर पर पैर रखकर वहाँ से भाग गये। भल्लूककेतु ने थोड़ी देर उनकी ओर देखा। फिर मुस्करा कर, वह अपनी पत्थर की कुर्सी पर जैसे आँखें मूँदकर बैठ गया, जैसे कुछ हुआ ही न हो।

सैनिकों ने भागकर राजा के पास जाकर सारी घटना सुनाई। वह सुन राजा के गुस्से का ठिकाना न रहा।

"अरे, निकम्मो! तुम एक जङ्गली को पकड़ कर न ला सके। छी।" राजा ने कहा।

तुरन्त मन्त्री ने सामने आकर विनयपूर्वक कहा-"महाराज, जल्दबाजी न कीजिये। हम नहीं जानते कि वह राक्षस है या जङ्गली। आप शायद जानते ही हैं कि वह मछुआ पिङ्गल जादूगर भी है।"

"भले ही वह मान्त्रिक हो, जादूगर हो! उसका इतना साहस कि अवन्तीनगर के राजा का धिक्कार करे? उसका सिर कटवाकर किले के फाटक पर लटकवा दूँगा।" कहते कहते उसने तालियाँ बजाकर-"सेनापति- सेनापति।" सेनापति को बुलाया।

"हुजूर!" कहता सेनापति सामने आया। राजा ने उसको आज्ञा दी-"पिङ्गल के महल को मिट्टी में मिला दो और वहाँ जितने आदमी हो उनको बाँधकर लाओ।"

सेनापति बहुत जोश में आगया क्योंकि पिछले दिनों कोई युद्ध न हुआ था। इसलिए वह बहुत निरुत्साहित हो गया था। उसने सोचा कि इस बार वह नदी के किनारेवाला महल मिट्टी में मिला सकेगा और वहाँ के लोगों की बोटी बोटी कटवा सकेगा। "क्या अच्छा होता अगर इस पिङ्गल के पास छोटी मोटी सेना होती। मुक्का-मुक्की, हाथा पाई होती, भयङ्कर युद्ध होता। मजा आता।" उसने सोचा।

दो सौ घुड़सवार और तीन सौ पदातियों के साथ सेनापति धूम धाम से पिङ्गल के महल के पास गया। भल्लूककेतु एक आँख मूँद कर यह दिखा तो रहा था कि वह सो रहा था; पर वह एक आँख से

सेनापति का आगमन भी देख रहा था। सेनापति ने चार दीवारी के पास आकर, भाले से भल्लूककेतु का निशाना बनाकर पृछा-"क्यों जङ्गली! तुम्हारा मालिक कहाँ है? उठो, खड़े हो।"

भल्लूककेतु, आँखें मलता, अङ्गडाइयाँ लेता ऐसा उठा जैसे कि सचमुच सोकर उठा हो। उसने सेनापति को देखकर गुस्से में पूछा- "कौन है यह नीच मनुष्य? तुम ही हो?"

ये प्रश्न सुनकर सेनापति गुस्से के कारण जल सा उठा। उसने भाला आगे कर, घोड़े को भल्लूककेतु की ओर बढ़ाया। जब भाला लगने ही वाला था तो भल्लूककेतु एक तरफ हट गया। घोड़े पर सवार सेनापति को दोनों हाथों से पकड़कर, पत्थर की कुर्सी पर डाल दिया और उस पर चढ़कर जोर से तालियाँ बजाने लगा, अट्टहास करने लगा।

तुरन्त उसके अनुचर, तरह तरह के पत्थर के हथियारों को लेकर आये।

उन्हें भागते हुये सैनिकों को दिखाकर भल्लूककेतु ने कहा-"इन्हें पकड़कर रुई की तरह धुन दो।"

भल्लुक केतु के अनुचरों ने राजा की सेना पर हमला किया और पत्थर के हथियारों से उनकी खूब मरम्मत की। यह दृश्य देख कर पिङ्गल, उसकी माँ, और भाई ठठा मारकर हँसे, वे तब महल के दुमञ्जले पर खड़े थे।

बचे खुचे सैनिक भागे भागे राजमहल में गये। राजा से जाकर शिकायत की। तब राजा जान गया कि पिङ्गल कोई मामूली जादूगर न था। उसने अपने गुस्से को रोक कर मन्त्री से कहा-"मन्त्री! यह बहुत ही अपमानजनक

बात है। मौत ही हो जाये, मैं स्वयं अपनी सेना का नेतृत्व कर उस पिङ्गल से युद्ध करने निकलूँगा। अगर मैं मर जाऊँ तो तुम ही मेरी इकलौती लड़की की सदैव रक्षा करना और योग्य वर ढूँढकर उसका विवाह कर देना।"

मन्त्री थोड़ी देर तक कुछ सोचता रहा। "महाराज! आप बिना बुरा माने, जो कुछ मैं कहने जा रहा हूँ, वह कृपया सुनिये। यही मेरी सविनय प्रार्थना है।" उसने कहा।

"क्या है वह?" राजा ने पूछा।

"पिङ्गल नौजवान है। अविवाहित है। जो उसे जानते हैं उन्होंने बताया है कि देखने भालने में भी वह किसी राजा से कम नहीं है। शौर्य, साहस, ऐश्वर्य में भी उसको मात करनेवाला कोई नहीं। राजकुमारी का उसके साथ विवाह कर देने से आप पर और राज्य पर जो आपत्ति आई हुई है, वह टल जायेगी।" मन्त्री ने कहा।

"मैं इससे सहमत हूँ।" राजा ने कुछ देर सोचकर, सन्तोषपूर्वक कहा।

मन्त्री जाकर पिङ्गल और उसकी माँ से मिला। उसने उनको राजा की इच्छा के बारे में बताया। पिङ्गल भी विवाह के लिए मान गया क्यों कि उसने राजकुमारी के सौन्दर्य के बारे में पहले ही सुन रखा था।

उसके कुछ दिनों बाद पिङ्गल का और राजकुमारी का धूम-धाम से विवाह हुआ। महामन्त्रिक पद्मपाद ने विवाह के अवसर पर वर-वधू को आशीर्वाद दिया। फिर कुछ समय बाद राजा की मृत्यु हो गई। पिङ्गल उसके बाद अवन्तीनगर का राजा बना। उसने कई साल प्रजा की इच्छा के अनुकूल राज्य किया।

[समाप्त]

विक्रमार्क तो हार मानना जानता न था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव उतार कर कन्धे पर डाल चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! मनुष्य के लिए सबसे अधिक मुख्य चीज है विश्वास। किसी भी हालत में मनुष्य को अपना विश्वास नहीं छोड़ना चाहिए। किसी समय सत्यपाल नाम के नवयुवक ने विश्वास छोड़कर कितनी बड़ी गलती की थी, बताता हूँ, ध्यान देकर सुनो।" उसने तब यह कहानी सुनाई।

भद्रावती नगर में एक राम का मन्दिर था। उस मन्दिर का राम, कहा जाता था, बहुत ही महिमाशाली था। वह अपने पुजारी द्वारा भक्तों के सन्देहों का निवारण

करता। उनके कष्टों को दूर करता। कई बार भगवान का स्वर ही सुनाई पड़ता। जब कभी वैसा होता तो मन्दिर में उपस्थित भक्त, भक्ति में सहसा तन्मय हो जाते।

उस मन्दिर में आञ्जनेय स्वामी पुजारी था। लोग उनको हनुमान का अवतार समझकर उनकी पूजा किया करते थे, आदर किया करते थे।

भद्रावती के राम मन्दिर की प्रसिद्धि देश विदेशों में थी, इसलिये लोग दूर दूर से भगवान के दर्शन के लिए आया करते।

इन यात्रियों के कारण भद्रावती नगर की आर्थिक स्थिति इतनी सुधरी कि वह एक महानगर हो गया।

पुजारी एक बार बीमार पड़े और कुछ दिनों में वे राम में लीन हो गये। मन्दिर में एक और पुजारी को नियुक्त करना था। इसके लिये सत्यपाल नाम का नवयुवक निश्चित हुआ।

सत्यपाल बचपन से ही रामभक्त था। सिवाय राम नाम जपन के उसको और कोई काम न था। वह पूजा पाठ की पूरी क्रिया भी अच्छी तरह जानता था। इसलिये सत्यपाल का पुजारी नियुक्त होना सबको जँचा।

परन्तु एक बात हुई। जब से सत्यपाल पुजारी नियुक्त हुआ था तब से मूर्ति चुप हो गई थी। पहले की तरह भक्त आते, प्रश्न पूछने पर उनका उत्तर भगवान पुजारी को न बताते, मूर्ति भी कभी स्वयं न बोलती।

यह परिवर्तन देख सत्यपाल बहुत चिन्तित हुआ। "स्वामी, मुझ से क्या गलती हुई है? आप क्यों नहीं बोलते? मौन रहने से तो अच्छा

यही है कि आप मुझे दण्ड दें।" उसने कई तरह से राम की प्रार्थना की। पर श्रीराम न बोले।

सत्यपाल ने नगर के बड़े लोगों से कहा-"अगर इतने बड़े देवता मौन हो गये हैं तो गलती मेरी ही रही होगी, यह साफ़ है।"

"हाँ, भाई, गल्ती तुम्हारी ही होगी। उसको ठीक कर देवता का अनुग्रह प्राप्त करो। नहीं तो हमारे मन्दिर की महिमा चली जायेगी। यात्री आना छोड़ देंगे, हमारे नगर की हानि होगी।" बड़े बुजुर्गों ने कहा।

सत्यपाल की तो मानों अक्ल ही जाती रही। यह मन्दिर में वापस जाकर, पागल की तरह दरवाजे के पास बैठकर कुछ सोचने लगा। मन्दिर में आनेवाले भक्तों की संख्या कम होती जा रही थी।

दुपहर तक मन्दिर में एक भी भक्त न रहा। किसी के आने की आहट सुन सत्यपाल ने सिर उठाकर देखा। एक बुढ़िया आ रही थी। वह उस बुढ़िया को नहीं जानता था। वह भी एक भक्त थी। प्रायः मन्दिर के प्राङ्गण में दिखाई देती थी। कभी

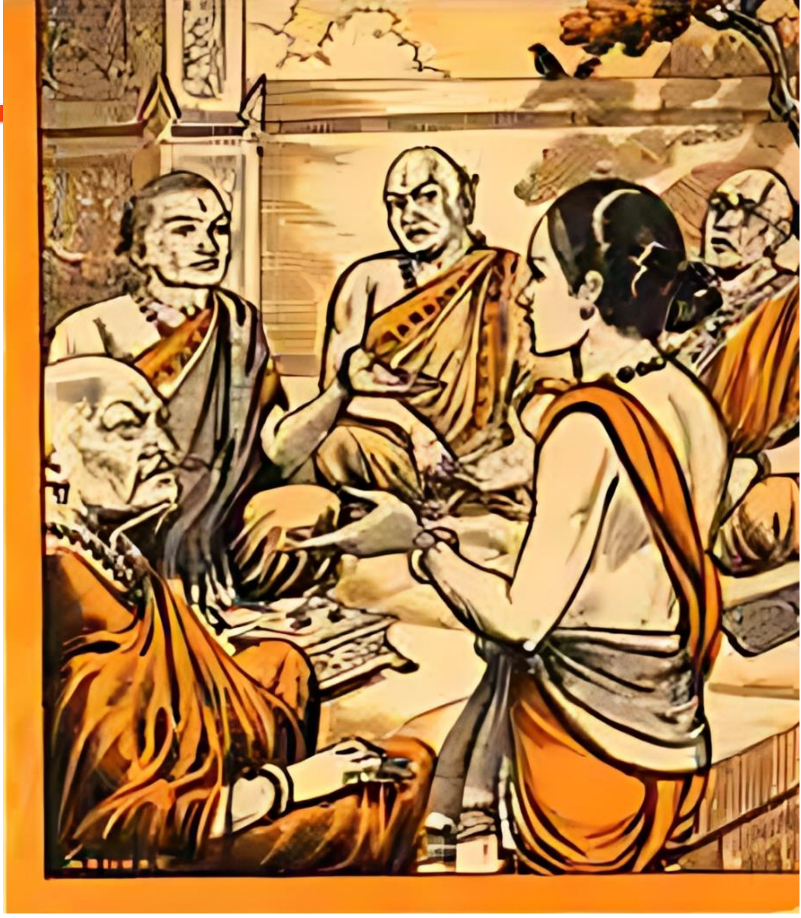

वह आङ्गन बुहारती तो कभी पेड़ों को पानी देती।

उस बुढ़िया ने सत्यपाल के पास जाकर पूछा-"क्यों, स्वामी बोल नहीं रहे हैं?"

"नहीं माँ, मुझे नहीं सूझ रहा कि क्या करूँ।" सत्यपाल ने निश्वास छोड़ते हुये कहा।

"अगर तुमने हुण्डी में से सौ रुपये निकालकर दिये तो मैं ऐसा रास्ता बताऊँगी कि भगवान तुम से बातें करने लगेंगे।" बुढ़िया ने उससे अलग कहा।

यह सुन सत्यपाल आगबबूला हो गया। "छी, बुढ़िया कहीं की, मैं तो इस ख्याल में था कि तुम कोई भक्त हो। घूस देकर भगवान का अनुग्रह चाहती हो? जाओ, उठो और कहीं जाओ।" सत्यपाल ने झिड़का। बुढ़िया बिना गुस्सा किये चली गई। अगले दिन उसी समय आकर उसने सत्यपाल से कहा-"दो सौ रुपये दो मैं वह रास्ता बताऊँगी जिससे भगवान बोलेंगे। यूँ हि न बिगड़ो।"

सत्यपाल ने उसे फिर ड़ाँटा। परन्तु उसके बाद उसे एक प्रकार का सन्देह होने लगा। भगवान शायद इस तरह उसकी परीक्षा तो नहीं ले रहे? इस बुढ़िया को घूस देना भगवान की दृष्टि में गलती ही हो।

वह इसी उधेड़बुन में था कि तीसरे दिन बुढ़िया के आते ही उसने कहा-"जो तू चाहेगी वह मैं दूँगा। मुझे ऐसा उपाय बताओ कि स्वामी बोलें।"

"हुण्डी में से तीन सौ रुपये निकाल कर दो।" बुढ़िया ने कहा। सत्यपाल ने उसे दे दिये। "अब बताओ क्या करूँ?" उसने पूछा।

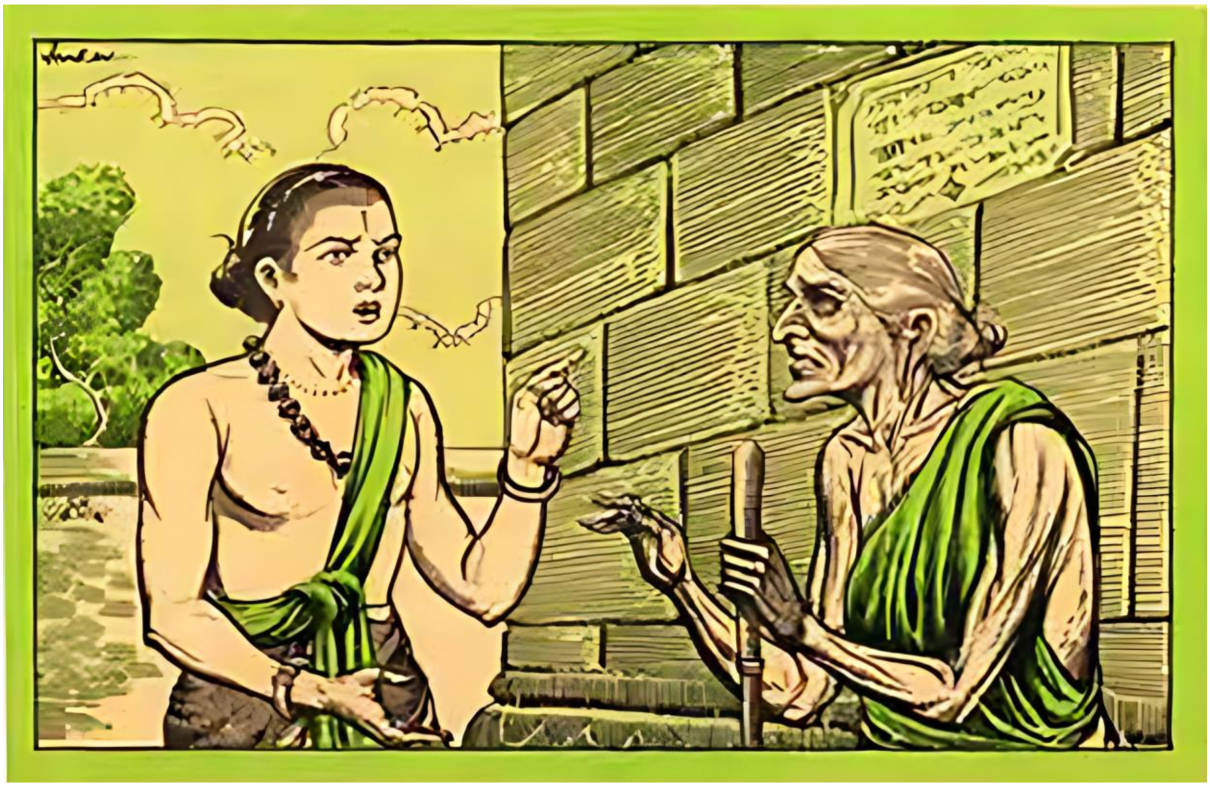

"मूर्ख! तुम में बुद्धि नहीं है। इतने दिन कौन बोला करता था? मैं और अञ्जनेय स्वामी। भक्त जो कुछ पूछा करते हम बताया करते। मूर्ति के पीछे भूमि में एक गढ़ा है। मैं उसमें छुप कर सब कुछ बताया करती थी। अगर तुमने मुझ पर भरोसा रखा तो तुम्हारी मदद भी करूँगी।" बुढ़िया ने कहा।

सत्यपाल का तो हृदय रुक-सा गया। "मुझे तुम से कोई काम नहीं है। जा।"

बुढ़िया को भेजकर सत्यपाल तभी मन्दिर से बाहर कहीं चला गया। बुढ़िया की बातें सुनकर उसका राम की महिमा में, जनता को उगनेवाले पुजारियों में, मन्दिरों में विश्वास चला गया। भद्रावती नगर से, बिना किसी को कहे वह निकल गया और देश देशान्तर में घूमने फिरने लगे। भीख माँगकर तरह तरह के काम करके किसी तरह पेट भरता। वह अनेक मास यों घूमता रहा। परन्तु भद्रावती छोड़ने के बाद उसने एक मन्दिर में भी पैर न रखा। एक बार भी भगवान का नाम न लिया।

दो वर्ष बीत गये। अन्धेरा होने के बाद सत्यपाल एक गाँव की धर्मशाला में

गया। वह धर्मशाला के बरामदे में बैठा था तो पास ही कुछ लोग भद्रावती के राम की मूर्ति की महिमा गाने लगे। सत्यपाल वह सब सुन रहा था।

उसने आश्चर्य से उनके पास जाकर कहा-"क्यों भाई, क्या भद्रावती की राम की मूर्ति सचमुच महिमावाली है, बताओ?"

"इस तरह क्या पूछ रहे हो? कहीं ऐसे लोग भी हैं, जो भद्रावती के राम की महिमा नहीं जानते हों? नये पुजारी के आने के बाद तो उनकी महिमा के कहने ही क्या? उसके मन्दिर में आते ही, मूर्ति ने कहा कि उस मन्दिर में रहनेवाली बुढ़िया के गले में रुपया फँस जायेगा और वह मर जायेगी। उसका कहना ठीक निकला।" उनमें से एक ने कहा।

"तो आजकल मन्दिर का पुजारी कौन है?" सत्यपाल ने उन लोगों से उत्कण्ठापूर्वक पूछा।

"वह बहुत छोटा है। नाम उसका सत्यपाल है। उसके मुँह पर क्या तेज है!" उन्होंने कहा।

"सत्यपाल! मेरा नाम भी सत्यपाल है।" सत्यपाल ने कहा।

अन्धेरे में उन लोगों ने सत्यपाल को गौर से देखा कहा-"आश्चर्य है। उस पुजारी का केवल नाम ही नहीं हैं वह ठीक उस पुजारी की तरह भी है।"

उसके मन्दिर छोड़कर आने के बाद उसी की शक्ल-सूरत वाला, उसी के नाम बाला कोई पुजारी हो गया था, यह जान सत्यपाल सोचने लगा-"इसमें जरूर कोई बहुत बड़ा धोखा है।"

अगले दिन वह भद्रावती गया और सीधे मन्दिर में गया। मन्दिर के पास

बहुत बड़ी भीड़ थी। भीड़ को जैसे तैसे चीरता सत्यपाल मन्दिर के अन्दर गया। उसको देखकर लोगों ने कहा-"पुजारी हैं। रास्ता दो।"

सत्यपाल ने देखा कि मन्दिर में ठीक उसी की शक्ल का आदमी पुजारी था। उसे ऐसा लगा कि वह पुजारी उसे पास बुला रहा था। सत्यपाल पुजारी के पास गया।

"क्यों भाई, कोई बुढ़िया ठग मेरे नाम से लोगों को धोखा दे रही है, यह सुन, मुझ में विधास क्यों छोड़ा? तुम्हारा जाना क्या अच्छा है? देख, अब मुझे तुम्हारा काम करना पड़ रहा है।" पुजारी ने कहा।

सत्यपाल जान गया कि उससे बात करने वाले श्रीराम स्वयं थे। "मेरी गल्ती क्षमा करो, भगवान में अब कभी आपको छोड़कर न जाऊँगा।" आपकी सेवा करूँगा। उसने पुजारी से हाथ जोड़कर कहा।

"मुझे तुम्हारी सेवा नहीं चाहिये। मुझ में विश्वास रख कर लोगों की सेवा करो।" कहकर पुजारी एक बार चमका

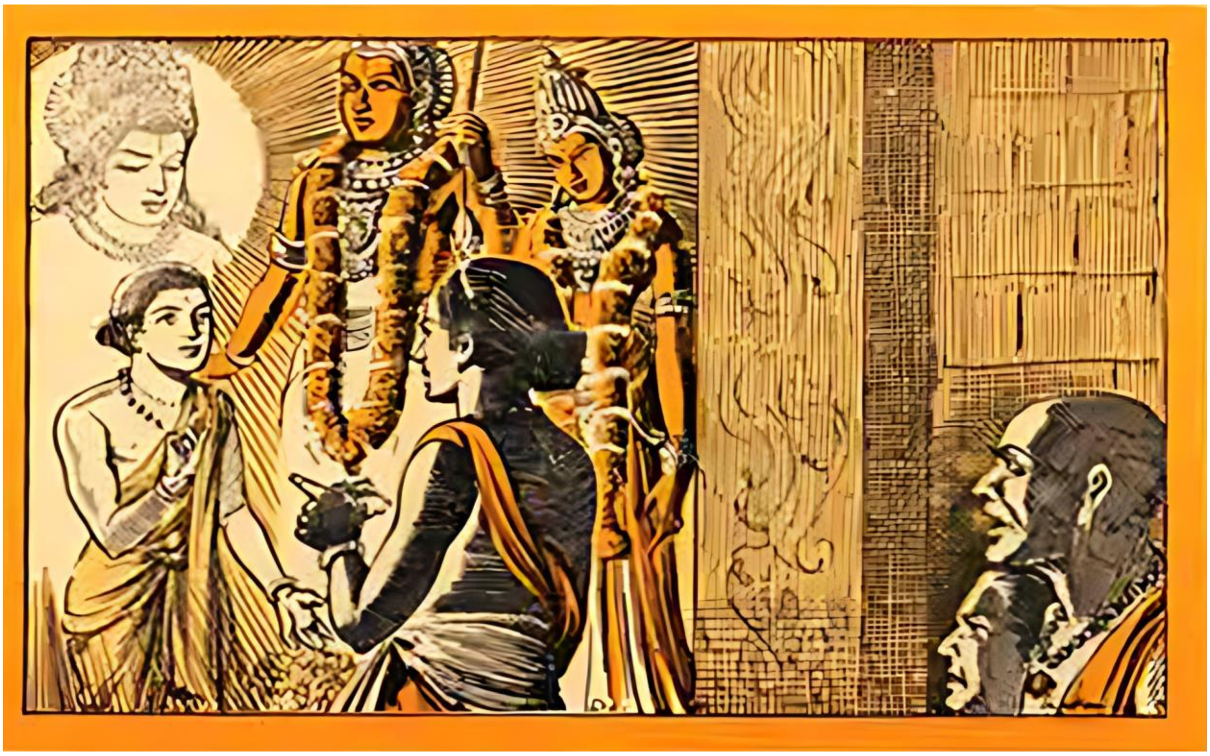

और अन्तर्धान हो गया। सत्यपाल भी वापस चला गया। उसके बाद उस मन्दिर में किसी को देवता का स्वर नहीं सुनाई पड़ा। धीमे धीमे लोगों ने उस मन्दिर के बारे में बातें करना भी छोड़ दिया। कालक्रम से भद्रावती का मन्दिर खण्डहर हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा-"राजा, मुझे एक सन्देह है। रामचन्द्र ने सत्यपाल का पुजारी होना क्यों नहीं माना? इसलिए कि वह उस पर विश्वास छोड़कर चला गया था? भद्रावती रामालय की महिमा चले जाने का कारण क्या सत्यपाल था? या उस मन्दिर की पूज्य श्रीराम की मूर्ति? इनका तूने जान बूझकर उत्तर न दिया तो तेरा सिर तुरत फूट जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा-"यह असत्य है कि श्रीराम को सत्यपाल पर गुस्सा आ गया था क्योंकि उसको अपने ऊपर विश्वास न रहा था। गुस्सा आया होता तो वह उसकी जगह उसकी शक्ल बदल कर इतने दिनों पुजारी का काम कर अपनी महिमा नहीं दिखाता। श्रीराम ने अपनी महिमा इसलिए ही दिखाई थी ताकि उसको उसमें विश्वास हो। उससे पहले जितनी महिमा उस मन्दिर में देखी गई थी, वह सब धोखा था। परमात्मा ने अपनी वास्तविक महिमा केवल अपने भक्त सत्यपाल को ही दिखाई थी। इसलिए यदि उस मन्दिर की महिमा जाती रही तो उसका कारण न सत्यपाल था, न श्रीराम ही।"

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होगया और पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)

[१०]

[राजकुमारी के अज्ञान से अलादीन अद्भुत दीप खो बैठा था। परन्तु वह अपनी अंगूठी के भूत की सहायता से मोरोको में अपनी पत्नी से मिला। मान्त्रिक को एक चाल से मार कर, अपनी पत्नी और महल को वापस लाया। फिर से वह राजा का स्नेह पात्र हो गया। उसके सारे कष्ट दूर हो गये। किन्तु --]

कुछ महीने बीत गये। अलादीन ने एक दर्जी के लड़के के रूप में जीवन शुरु के किया था। और अब वह ऐसा ऐश्वर्य, पत्नी और माँ के साथ अनुभव कर रहा था, जो बड़े-बड़े महाराजाओं को भी दुर्लभ था।

एक दिन वह अपने स्फटिक मण्डप में खिड़की से बाग की शोभा देख रहा था कि उसकी पत्नी उसके पास आकर खड़ी हो गई। उसने कहा- "भगवान की दया से हमें किसी चीज की कमी नहीं है। परन्तु हमारे बच्चे होते न देख मुझे कुछ दुख और चिन्ता हो रही है। इस नगर में फातिमाँ नाम की कोई योगिन आई हुई हैं। उन्हें देखने से बाञ्झ के भी बच्चे पैदा हो जाते हैं। क्या उन्हें हम एक बार अपने घर बुलायें?"

अलादीन ने न केवल इसके लिए अपनी स्वीकृति ही दी परन्तु उनको लिवा लाने के लिए चार गुलाम भी भेजे।

योगिन आई। उनका मुँह ढका हुआ था। उनके गले में मोटी रुद्राक्ष माला थी। बड़ी प्रभावशाली जान पड़ती थीं।

राजकुमारी ने जाकर योगिन को नमस्कार किया। योगिन ने उसको आशीर्वाद दिया। राजकुमारी ने गौरवपूर्वक उनको आसन दिया। "माँ, आपका आशीर्वाद व्यर्थ नहीं जाता क्योंकि आप जैसे भक्तों की बात भगवान सुनते हैं। मेरी एक इच्छा है। मैं बच्चे चाहती हूँ। उसके लिए मैं क्या करूँ, बताइये। जो आप बतायेंगी, मैं वह करने के लिए तैयार हूँ। अगर आपने मेरा यह उपकार किया तो मैं आपको कितने ही भेंट दूँगी। मैं जानती हूँ कि आपको उन भेंटों की जरूरत नहीं है। मेरी दी हुई भेंट यदि आपके योग्य न हो तो आप उसे गरीबों मैं बाँट सकते हैं।"

राजकुमारी जब इस तरह बातें कर रही थी कि योगिन की आँखों में एक विचित्र प्रकार की कान्ति आई। उनके शरीर में एक प्रकार का आनन्द फूट-सा रहा था। उन्होंने कुछ न कहा। परन्तु अपने दोनों हाथ राजकुमारी के सिर पर रख कुछ जपने लगीं मानों पार्थना कर रही हों। उसके बाद उन्होंने कहा- "राजकुमारी! भगवान की दया से तुम्हारे माँ बनने के लिए एक उपाय सुझा है, पर तुम्हारे लिये उस उपाय का आचरण करना असम्भव है।"

राजकुमारी ने योगिन के पावों पर पड़कर कहा-"माँ, मेरे पति अलादीन के लिए कोई भी चीज़ असम्भव नहीं है। बताइये, मुझे क्या करना है। नहीं तो आपके चरणों में ही मैं अपने प्राण छोड़ दूँगी। मुझे सन्तान चाहिये।"

योगिन ने अंगुली उठाकर कहा- "अगर तुम बच्चे चाहती हो तो उसका एक ही रास्ता है। काकेशस पर्वतों में रहनेवाले बड़े गिद्ध के अण्डे को लाकर तुम अपने बुर्ज पर लटकाओ। अगर तुम उसे रोज़ देखते रहे तो तुम्हें गर्भ होगा और बच्चे भी होंगे। यही मेरी सलाह है।"

"माँ, मैं नहीं जानती कि यह गिद्ध क्या है और उसका अण्डा कैसा होता है। परन्तु अगर ऐसी कोई चीज़ इस संसार में कहीँ है तो उसे मेरा पति जरूर ला सकेगा। यह मेरा विश्वास है। उन्होंने कितने ही चमत्कार किये हैं।" राजकुमारी ने सन्तुष्ट होकर कहा।

योगिन जाने के लिए उठीं। राजकुमारी ने उनसे आतिथ्य स्वीकार करने के लिए बहुत बार कहा। किन्तु योगिन ने उसकी न सुनी। "कितने ही अभागे मुझे देखने के लिए आये हुए हैं। उनकी इच्छायें पूरी करनी हैं। कष्ट भी दूर करने हैं। अगर भगवान की इच्छा रही तो कल आकर तुम्हारा हालचाल मालूम करूँगी।" कहकर वे चली गई।

उनके जाने के कुछ देर बाद अलादीन आया और पत्नी को चिन्तित देखकर उसने पूछा-"क्यों ऐसी हो?"

"काकेशस पर्वत से बड़े गिद्ध का अण्डा तुरन्त मँगवाइये। नहीं तो मैं जिन्दा नहीं रहूँगी।" राजकुमारी ने कहा।

अलादीन ने हँसते हुए कहा-"यदि तेरे प्राण इतनी आसानी से रखे जा सकते हैं तो तुम्हारे चिन्तित होने की कोई आवश्यकता नहीं। उस अण्डे को अभी मँगाता हूँ। पर उसका क्या करोगी?"

"उनको बुर्ज पर लटका कर योगिन ने उन्हें रोज़ देखने के लिए कहा है। वैसा करने से बच्चे होंगे।" राजकुमारी ने कहा।

"अच्छा, तो उसे अभी मँगाता हूँ।" अलादीन ने कहा।

उसने अपने कमरे में जाकर अद्‌भुत दीप को रगड़ा। भूत ने प्रत्यक्ष होकर पूछा-"क्या आज्ञा है?"

"काकेशस पर्वत के शिखरों पर रहनेवाले बड़े गिद्ध पक्षी का अण्डा तुरन्त चाहिये। लाओ।" अलादीन ने कहा।

यह बात अलादीन के मुख से निकली ही थी कि अद्‌भुत दीप इस तरह गरजा कि सारा महल काँप-सा उठा। "मूर्ख, परम नीच। तुम क्या कह रहे हो? तुम हम भूतों के राजा गिद्ध पक्षी की सन्तान को लाने के लिए कहते हो? अंगूठी यदि तेरी रक्षा नहीं कर रही होती तो तुझे मैं भस्म कर देता।" भूत चिल्लाया।

अलादीन घबरा गया। "भूत! मुझपर गुस्सा न करो। मैंने यह काम अपने लिये करने के लिए नहीं कहा था। यह काम मेरी पत्नी का है। उसने सन्तान की इच्छा से ही यह कामना

प्रकट की है। इसलिए गुस्सा न करो।"

तुरन्त भूत ने शान्त होकर कहा-"अलादीन! अच्छा हुआ कि यह तेरे लिये नहीं है। यह चाल एक और नीच की है। नहीं तो तुम, तुम्हारी पत्नी और तेरा महल सब नष्ट हो जाते। अपने को सिद्ध दिखानेवाली और कोई नहीं है सिवाय मोरोको मान्त्रिक के भाई के। देखने में वह जादूगर-सा है। दुष्टता में भी वह उससे कम नहीं है। उसका भाई, तेरे हाथों मारा गया है, यह जानकर वह तुमसे बदला लेना चाहता है। यह रहस्य तुम्हें मैंने बता दिया है, इसलिए तुम

उससे सावधान रहो।" यह कहकर भूत अदृश्य हो गया।

अलादीन को गुस्सा आया। उसने अपनी पत्नी के पास जाकर कहा- "गिद्ध पक्षी के अण्डे के मँगाने से पहले यह जरूरी हैं कि इस योगिन ने जो कुछ कहा है, मैं स्वयं सुनूँ। इसलिए उन्हें एक बार और बुलाओ। उनके आने तक मैं परदे के पीछे छुपा रहूँगा। उनसे एक बार और पूछो कि उस अण्डे का क्या करना है। कहना कि उनकी पहले बताई हुई बातें भूल गई हो।"

राजकुमारी ने उसकी बात मानकर, योगिन को बुलाया। योगिन आई। उनके राजकुमारी के पास आते ही अलादीन परदे के पीछे से उस कपट योगिन पर कूदा और अपनी तलवार से उसने उसका गला काट दिया।

"अरे अरे, आपने कितना बड़ा पाप किया है।" राजकुमारी ने गुस्से में कहा। अलादीन ने मुस्कराते हुए अलग पड़े हुए योगिन के मुँहपर से बुरका हटाया। उसकी दाढ़ी और मूँछे देखकर राजकुमारी चकित हुई और भयभीत भी।

अलादीन ने उस कपट योगिन के बारे में विस्तारपूर्वक बताया- "भगवान की क्योंकि हम पर अब भी कृपा है इसलिए हम इस आखिरी शत्रु से पीछा छुड़ा सके। अब हमें किसी से डरने की जरूरत नहीं है। इसके मरने से हमारे सब कष्ट दूर हो गये हैं।"

उसके बाद अलादीन के बहुत से बच्चे हुए। बूढ़ी अलादीन की माँ ने कितने ही पोते-पोतियों को गोदी में ढोया। वे बहुत दिनों तक आराम से जीते रहे।

(समाप्त)

काञ्चीपुर में कभी शक्तिसार नाम का एक वैश्य नवयुवक रहता था। बाप दादाओं का जमाने से व्यापार था। उसी में उसने भी लाखों रुपये कमाये। बीसवें वर्ष में उसकी शादी होनी थी।

"गृहणः प्रिय हिताय दार गुणाः" (पत्नी के गुण ही पति के लिए उपकारी व हितकारी होते हैं।) क्योंकि शक्तिसार ने यह सुन रखा था इसलिए उसने एक गुणवती स्त्री से विवाह करने का निश्चय किया। वह स्वयं अपने लिये लड़की खोजने के लिए निकल पड़ा।

शक्तिसार ज्योतिष जानता था भविष्य बताने के उद्देश्य से उसने कई कन्याओं के हाथ देखे। उसने अच्छी लड़कियों की एक छोटी-सी परीक्षा भी ली।

वह अपने साथ दो सेर धान ले जा रहा था। वह जिस लड़की को पसन्द करता, उसे वह धान दे देता और कहता-"क्या इस धान से मेरे लिये भोजन पका सकोगी?" यह सुन कई कन्यायें उसपर हँसती और कई अचरज करके पूछती-"यह कैसे हो सकेगा?" परन्तु किसी ने भी वह न किया।

जब वह लड़की के लिए यों खोज रहा था तो जाते जाते वह कावेरी नदी के किनारे गया। वहाँ उसने एक झोपड़े में गुणवती नाम की लड़की देखी। उसके साथ उसको पालने पोसनेवाली एक बुढ़िया थी। वे बहुत गरीब थे।

शक्तिसार ने गुणवती का हाथ देखा। उसने उसमें कुछ अच्छे लक्षण पाये। उसने उससे कहा-"मेरे पास धान है। क्या उससे

आज के लिए भोजन तैयार कर सकोगी?" यही वह औरों से भी पूछ रहा था।

गुणवती यह सुन कर न हँसी न उसने आश्चर्य ही प्रकट किया। वह उसके लिए भोजन बनाने के लिए तैयार हो गई।

उसने धान भिगोकर सुखाया। फिर उसका छिलका निकाला। छिलका बुढ़िया को देकर उसने कहा-"इसे सुनारों को बेचकर जो पैसा मिले उससे न अधिक सूखी, न अधिक गीली लकड़ियाँ ले आना। आमले के बीज भी लेते आना।"

बुढ़िया ने वैसा ही किया। गुणवती ने चूल्हा जलाकर, चावल धोकर, चूल्हे पर रखे। चावल के उबलते ही, उसने माण्ड निकाली। उसमें उसने नमक डाली। उसमें आमले के बीज डालकर, मुट्ठी भर अन्न लेकर शक्तिसार को देते हुये कहा-"इसे मुख में डाल लो और माण्ड पी लो। फिर थोड़ी देर विश्राम कर, स्नान करके आओ, तब मैं तुमको भोजन परोसूँगी।"

चावल के पकते ही गुणवती ने लकड़ियाँ बुझा दी और उनके कोयले बनाकर बुढ़िया को देते हुए कहा-"इन्हें भी किसी को देकर जो पैसे मिलें, उनसे शाक और लस्सी भी लेते आना।" बुढ़िया के लाये हुए शाक को भी उसने बनाया। भोजन के समय के पहले ही उसने अतिथि को नहाकर आने के लिए कहा।

शक्तिसार ने स्नान करने के बाद शाक और लस्सी के साथ भोजन किया। उसे गुणवती की बचत और सूझ बूझ देखकर सन्तोष हुआ। उसने उसे अपना सारा बृत्तान्त सुनाया और उससे शादी करने के लिए कहा। गुणवती मान गई। वह उसे अपने शहर ले गया। वह उसके साथ बहुत दिनों तक सुख से रहा।

सैकड़ों साल पहले साबूर नाम का बादशाह फारस पर राज्य किया करता था। उन दिनों दुनियाँ में उससे बड़ा सम्राट कोई न था। दान, धर्म आदि में, प्रजा को सुखी रखने में भी उससे बड़ा कोई न था। उसके महल में हर कोई जा सकता था, चाहे जो माँग सकता था। उसके मुख से कभी "नहीं" न निकलता। वह सबकी इच्छाओं को पूरा करने का प्रयत्न करता।

साबूर के एक कमाल अम्मार नाम का लड़का था और तीन खूबसूरत लड़कियाँ थीं। वह प्रति वर्ष दो उत्सव मनाया करता। एक उत्सव बसन्त में होता और दूसरा शरत काल में। इन उत्सवों में बादशाह बड़ी बड़ी दावतें देता। खुशियाँ मनाता। इन उत्सवों में संसार के कोने कोने से लोग आते, बादशाह को उपहार देते और उसका सत्कार पाते। कैदी छोड़े जाते। कर्मचारियों को तरक्की मिलती, उनकी हैसियत बढ़ायी जाती, वेतन वृद्धि की जाती।

एक साल वसन्तोत्सव के अवसर पर तीन सिद्ध पुरुष आये। उनमें से एक भारतदेश से आया, दूसरा रुमी देश से और तीसरा फारस के किसी दूर प्रान्त से। औरों की तरह ये तीन भी बादशाह के लिए तीन चीजें भेंट में लाये। किन्तु इनकी लाई हुई तीनों चीजें बड़ी विचित्र थीं, वैसी चीजें कोई और न लाया था।

भारत देश से आये हुए सिद्ध पुरुष ने बादशाह को मनुष्य की एक सोने की मूर्ति

श्री बिमल चौधरी

दी। उस मूर्ति के हाथ में सोने का बाजा था। बादशाह उसे देखकर बड़ा खुश हुआ। उसने आश्चर्य से पूछा-"है तो यह बहुत सुन्दर। पर इसका उपयोग क्या है?"

"महाप्रभु! आप इसे अपने किले के फाटक पर रखवाइये। जब कोई शत्रु किले की ओर आयेगा तो यह मूर्ति उसे दूर से ही देख लेगी और हाथ के बाजे को मुख से बजायेगी। और उसकी आवाज सुनकर शत्रु तितर बितर होकर भाग जायेंगे। यह मूर्ति जबतक आपके किले के फाटक पर रहेगी, तब तक आपको शत्रु का भय न होगा।" भारत देश के सिद्ध पुरुष ने कहा।

फिर बादशाह ने रुमी देश के सिद्ध पुरुष के लाये हुए उपहार की ओर देखा। एक बड़े चान्दी के तख्त के बीच में एक सोने का मोर था। उसके चारों ओर सोने की मोरनियाँ थीं। वे भी देखने में बड़ी खूबसूरत थीं। आश्चर्यजनक थीं। बादशाह ने उससे भी पूछा कि उसका क्या उपयोग था।

"महाप्रभु! ये मोरनियाँ घण्टे में एक बार बोलकर दिन रात समय बतायेंगी। यह मोर महीने में एक बार मुख खोलकर चन्द्रमा को

दिखायेगा। इन मोर मोरनियों की यही विशेषता है।" रुमी देश के सिद्ध पुरुष ने कहा।

बादशाह ने खुश होकर तीसरे उपहार की ओर देखा। वह काली लकड़ी से बनाया गया घोड़ा था। उसके शरीर पर सोना चान्दी, वगैरह से जड़ी हुई कलें थीं। उस पर बैठने के लिए जीन थी। पैर रखने के लिए रिकाब भी थीं। सचमुच, वह जीता जागता घोड़ा लगता था।

"देखने में तो यह घोड़ा बहुत सुन्दर मालूम होता है। पर इसका उपयोग क्या है?" बादशाह ने पूछा।

फारस देश के सिद्ध ने कहा- "महाप्रभु! यह जादू का घोड़ा है। कोई भी इस पर चढ़कर आकाश में जहाँ चाहे वहाँ बहुत तेज़ी से जा सकता है। जो फासला मामूली घोड़ा एक साल में तय करता है वह यह एक दिन में तय कर लेगा।

"आश्चर्य है। आप तीनों के उपहार बहुत ही आश्चर्यजनक हैं। जब तक में इनको परख नहीं लेता तब तक इनकी महत्ता पर मुझे विश्वास नहीं हो सकता।" बादशाह साबूर ने कहा।

तुरत तीन चीज़ों की परीक्षा ली गई। तीनों ठीक निकलीं। सोने की मूर्ति ने सैनिकों को देखकर इस तरह बाजा बजाया कि वे हक्के-बक्के रह गये। मोरनियाँ भी हर घण्टे-घण्टे बोलीं। आखिर, जादू के घोड़ेवाला सिद्ध, उस पर चढ़कर आकाश में मण्डराया और ठीक बादशाह के सामने उतरा। सब को अचरज था।

इन बातों को देखकर बादशाह के आश्चर्य की तो सीमा न रही। उसने सिद्धों को बुलाकर कहा- "आपने मुझे बहुमूल्य चीजें लाकर उपहार में दी हैं। इनके

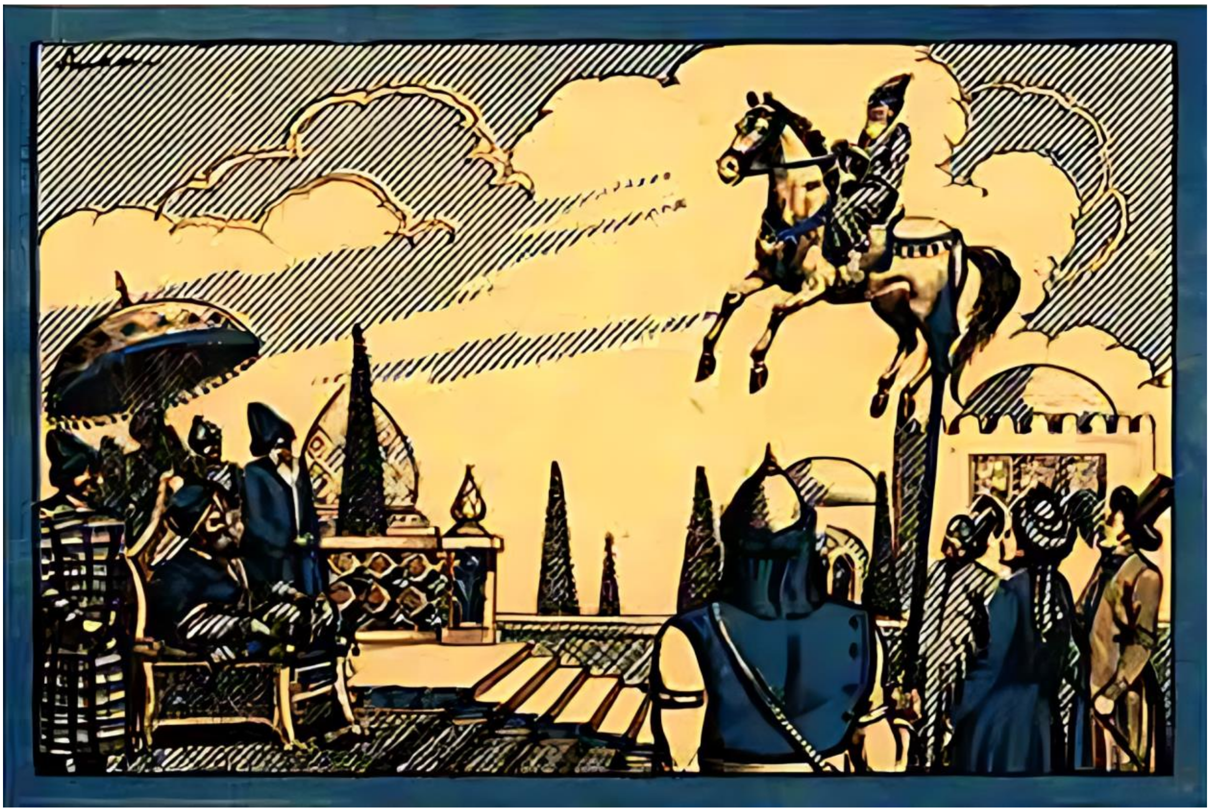

बदले में आप जो माँगे, उनको देना मेरा कर्तव्य है। इसलिए आप जो मुझसे चाहते हो, बताइये, मैं निस्सङ्कोच आपकी इच्छाओं को पूरी करूँगा।"

उन तीनों ने राजकुमारियों को विवाह में माँगा। बादशाह भी न झिझका। उसने काज़ियों को बुलाकर भरे दरबार में विवाह के लिए निमन्त्रण पत्र भी लिखवा दिये। बड़ी लड़की का भारत देश के सिद्ध पुरुष के साथ, मञ्झली का, रूमी के सिद्ध के साथ, छोटी का फारस के सिद्ध के साथ सबके सामने विवाह निश्चित हुआ।

इन विवाहों का इस तरह निश्चित किया जाना राजकुमारियाँ परदे के पीछे से देख रही थीं। उन तीनों में छोटी अपनी बड़ी बहनों से कहीं अधिक सुन्दर थी। वह अपने होनेवाले पति को देखकर घबरा गई; क्योंकि वह सौ साल का बूढ़ा था। उसके सारे शरीर पर झुर्रियाँ थीं। आँखें भी धँस गई थी। दुबला पतला था। देखने में भी बड़ा बदसूरत था।

यह देख कि उतना बूढ़ा उसका पति होने जा रहा था, वह अपने दुःख को न रोक सकी। अपने कमरे में जाकर बिस्तरे पर

ओंधा गिर, फूट-फूट कर रोने लगी। दुःख में उसने अपने सब कपड़े फाड़ दिये। मुँह भी खरोञ्च लिया। बाल बिखेर कर वह मानों दुःख की मूर्ति-सी बन गई। वह रोती जाती थी।

जब यह हो रहा था तब राजकुमार अम्मार शिकार पर गया हुआ था। उसने वापस आकर अपनी छोटी बहन की हालत जानी। तुरन्त उसके पास जाकर उसने पूछा- "क्यों रो रही हो बहन? तुम पर क्या मुसीबत आ पड़ी है? मुझसे सब कुछ सच सच बता।"

राजकुमारी ने और जोर से रोते हुए कहा-" में कुछ नहीं छुपाऊँगी, भैय्या! मैं इस घर में नहीं रहूँगी। कहीं जाकर भीख माँगकर रहूँगी। जब पिता मुझ पर इतना अन्याय कर रहे हैं तो सिवाय अल्लाह के मेरा और कोई नहीं है।"

"यह तो बता पिताजी ने तुझ पर क्या अन्याय किया है? निष्कारण तुम दुःखी मत हो।" अम्मार ने कहा।

"भैय्या! क्या कहूँ? पिताजी ने मुझे एक भयङ्कर बूढ़े को शादी में देना का वचन दिया है। वह बूढ़ा देखने में कोई जादूगर-सा लगता है। एक जादू के घोड़े को लाकर, पिताजी को देकर, उसने उनपर जादू-सा कर दिया है। मैं मर जाऊँगी, पर उस बूढ़े से शादी नही करूँगी।" राजकुमारी ने कहा।

कमाल अम्मार ने बहन को बहुत तरह से समझाया बुझाया। फिर उसने पिता के पास जाकर कहा- "पिताजी, सुना है, किसी जादूगर ने आकर आपको कोई उपहार दिया है। उसके लिए आप बहन की उससे शादी करने के लिए मान गये हैं। इस तरह बहन पर

अन्याय करना क्या ठीक है? यह कभी न हो सकेगा।"

बादशाह के पास ही वह सिद्धपुरुष था। उसको, ये बातें सुनकर बड़ा गुस्सा आया। परन्तु इतने में बादशाह ने कहा-"बेटा, अगर तुम इस सिद्धपुरुष के लाये हुए घोड़े को देखते तो ऐसा नहीं कहते।" कहकर वह अपने लड़के को आङ्गन में ले गया।

सेवकों ने जादू के घोड़े को लाकर राजकुमार के सामने रखा। उसका सौन्दर्य देखते ही अम्मार का मुँह खिल-सा गया। वह क्योंकि घुड़सवारी में बहुत तेज था, झट जादू के घोड़े पर जा बैठा। जिस तरह वह मामूली घोड़े को चलाता था उसी तरह उसने उस घोड़े के पेट छुआ। पर वह जादू का घोड़ा न हिला।

बादशाह ने सिद्ध की ओर मुड़कर कहा-"घोड़ा हिल नहीं रहा है। वह कैसे चलेगा यह राजकुमार को बताओ।" सिद्ध ने राजकुमार के पास जाकर कहा-"घोड़े के गले के बाईं तरफ सोने की जो कील दिखाई दे रही है, उसे एक तरफ घुमाने से घोड़ा उठेगा।"

राजकुमार ने कील घुमाई। तुरन्त घोड़ा बाण की गति से ऊपर उठा और देखते देखते आकाश में कहीं अदृश्य हो गया।

बादशाह ने राजकुमार के आने की इन्तजार की। घण्टे बीत गये। पर उसको न आता देख वह फिक्र करने लगा।

उसने सिद्ध से कहा-"स्वामी, हमें अब क्या करना चाहिये कि वह वापिस आ जाये?"

जब से राजकुमार ने कहा था कि उससे राजकुमारी की शादी नहीं होनी चाहिये तब से वह सिद्ध राजकुमार पर बहुत क्रुद्ध था। इसलिए उसने जानबूझकर राजकुमार को भूमि पर वापस आने की कील न बताई थी।

"राजा! अब हम कुछ नहीं कर सकते। अब आपके लड़के का वापस आना असम्भव है। क्योंकि अभी मैंने नीचे उतरने के लिए कील न बताई थी कि आपका लड़का आकाश में उड़ चला। उसकी इतनी जल्दबाजी दिखाना उसी की गलती है।" सिद्धपुरुष ने कहा।

बादशाह को सिद्ध पर बहुत गुस्सा आया। उस गुस्से में उसने अपने सैनिकों से कहा-"इस दुष्ट को खूब पीटकर जेल में डाल दो।" उन लोगों ने राजा की आज्ञा का पालन किया।

तदनन्तर, बादशाह दुःख सागर में डूब गया। उसका दुःख देखकर राजकर्मचारियों ने उत्सव बन्द कर दिये। महल के दरवाजे बन्द कर दिये। राजकुमार के चले जाने पर शोक प्रकट करने लगे।

(अभी और है)

[१२]

[जब जगह जगह घूम कर बहुत कष्टों के सहने के बाद रूपधर स्वदेश पहुँचा तो उसका लड़का धीरमति उसके बारे में जानने के लिए निकला। घर में राजकुमारों का उसकी माँ के साथ शादी करने के लिए धरना देना उसे न भाता था। उसने इस सिलसिले में पञ्चायत भी बुलाई। पर कुछ तय न हुआ। इसलिये पीरमति पिता का बृत्तान्त जानने के लिए इथाका से पैलास के लिए रवाना हुआ।]

नौका जब पैलास तट पर पहुँची तो काफी सवेरा हो गया था। समुद्र तट पर लोग वरुण देवता को काले बैलों की बलि दे रहे थे। वहाँ नौ यूथ थे। एक एक यूथ में पाँच-पाँच सौं आदमी थे। तट पर बड़ी-बड़ी भट्टियाँ लगी हुई थीं। खाना बनाया जा रहा था। नाविकों ने माल उतारा। नौका को किनारे पर लगाया। धीरमति और उसके साथ आया हुआ वृद्ध सहन किनारे पर चलने लगे।

"अब हम नवद्योत को देखने जा रहे हैं। तुम बिना किसी हिचकिचाहट के उससे साफ-साफ कहना कि तुम किस काम पर आये हो। अपने पिता का वृत्तान्त पूछना। क्या वे तुम्हारे पिता के बारे में कुछ जानते हैं? क्या वे मर गये हैं,

अगर मर गये हैं तो कहाँ और कब मरे हैं? मालूम करो कि नवद्योत यह जानता है कि नहीं। नवद्योत को अगर कुछ पता होगा तो छुपायेगा नहीं, बड़ा भला आदमी है। इन प्रश्नों को तुम्हारा पूछना ही अच्छा होगा।" धीरमति से सहन ने कहा।

"मैं अभी छोटा हूँ। मैं बड़ों से बातें नहीं करना जानता। इसीलिए मैं घबरा रहा हूँ।" धीरमति ने कहा।

सहन ने उसको ढ़ाढ़स बँधाया। यह उसे उस शिविर में ले गया जहाँ नवद्योत और उसके लड़के बैठे हुए थे।

अपरिचितों को आता देख नवद्योत के लड़कों ने आगे बढ़कर धीरमति और सहन की अगवानी की। फिर उन्होंने नवद्योत के समीप, रेत पर मुलायम खालों को बिछाया। उन पर अतिथियों को बिठाया। उनके लिए खान-पान की चीजें व अंगूरी रखी।

जब उन्होंने पेट भर खा लिया तब नवद्योत ने अतिथियों की ओर मुड़कर कहा-"अब बताइये कि आप कौन हैं। आप किसी देश से समुद्र पार करके आये हैं? आप यहाँ किस काम पर आये हैं?

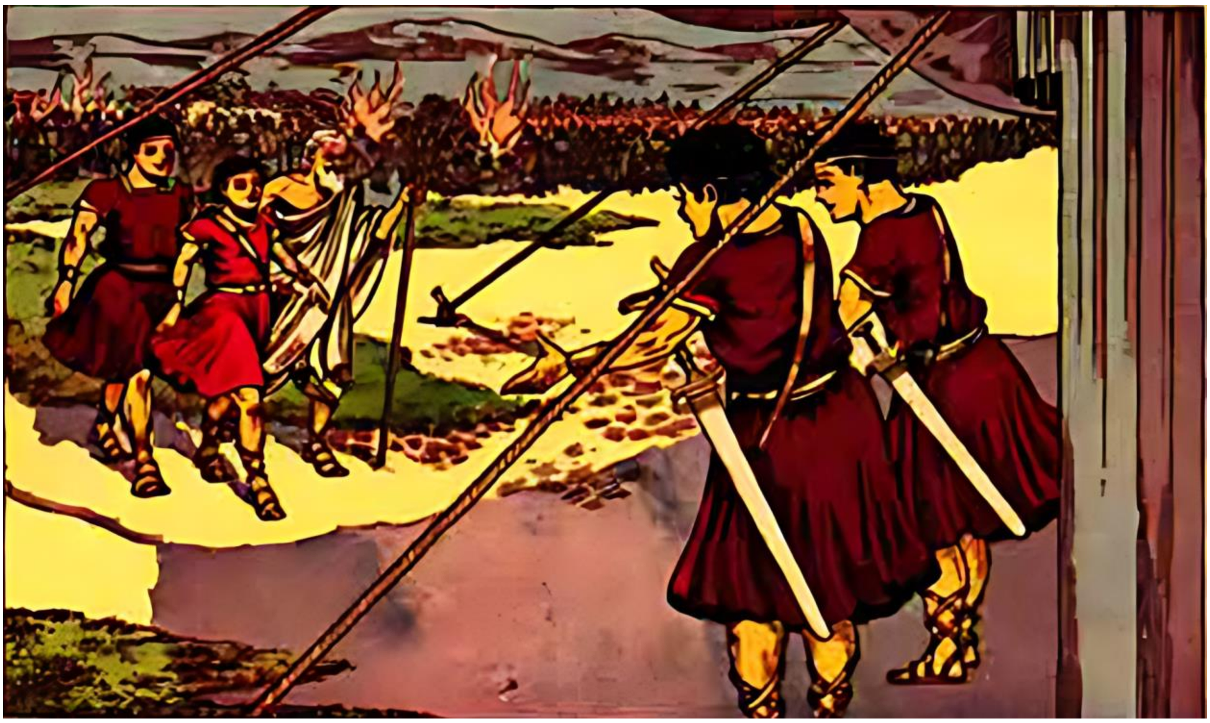

नहीं तो कहीं जाते-जाते यहाँ पड़ाव कर रहे हैं?"

धीरमति ने धैर्यपूर्वक यह जवाब दिया। "महाराज! हम इथाका के रहनेवाले हैं। मैं निजी काम पर ही आया हूँ। मैं अपने पिता रूपधर के बारे में जानना चाहता हूँ। उन्होंने आपके साथ ट्रोय युद्ध में भाग लिया था। युद्ध में जो जो गये थे उन सब के बारे में कुछ न कुछ जान सका, पर किसी ने भी मेरे पिता के बारे में कुछ न बताया। अगर आप निश्चित रूप से जानते हों कि वे मर गये हैं तो कृपा करके यह बताइये। आप सब ने रणभूमि में कितने ही कष्टों में हिस्सा बँटाया है। इसलिए आप जो कुछ जानते हैं कृपया वह बिना छुपाये मुझे यथा शीघ्र बताइये।"

यह सुन नवद्योत ने उससे इस प्रकार कहा-"बेटा, तुमने एक साथ सब पुरानी बातें याद दिला दी। वज्रकाय के नेतृत्व में हम सब नौकाओं में गये। ट्रोय नगर का घेरा डाला। नौ वर्ष तक भयङ्कर युद्ध चलता रहा। हमारे कई योद्धा रणभूमि में मारे गये। अगर उन सब घटनाओं

को सुनाने लगें तो पाँच-छः वर्ष लग जायेंगे। नौ वर्ष पश्चात् नाना कष्ट झेलने के बाद आखिर भगवान की कृपा से हमारी विजय

हुई। परन्तु अनुभव और ज्ञान में एक भी तुम्हारे पिता के मुकाबले का न था। हममें कभी भी मनमुटाब न हुआ। हम दोनों की सलाह हमेशा एक रही। जो कुछ हुआ सो हुआ। पर जब हम घर वापस आने लगे तो हम में गुटबन्दियाँ शुरु हो गयीं। राजा और प्रताप भी एक के न थे। दोनों में तू तू मैं मैं हुई। फिर क्या था? बाकी योद्धाओं में भी फूट-सी पड़ गई। वे उन दोनों भाइयों में से जिसके साथ होना चाहते थे, हो गये।

आधे लोग प्रताप के साथ निकल पड़े। बाकी आधे देवताओं की पूजा करने के लिए राजा के साथ रह गये। हम टनेडाँस पहुँचे थे कि तुम्हारे पिता ने कहा कि वह वापस चला जायेगा। उसके साथ कुछ लोग चल दिये। मैं और देवमय और कुछ लोग सीधे घर चले आये। बेटा, यही हुआ। में और लोगों के बारे में नहीं जानता हूँ।

सुना है कि वज्रकाय का लड़का, नवयोध और उसके सैनिक भी सुरक्षित पहुँच गये हैं। यह भी मालूम हुआ कि और भी कई लोग अपने अपने घर सही सलामत पहुँच गये हैं। तुमने सुना ही होगा कि राजा स्वदेश कैसे पहुँचा और कैसे अजबल ने उसकी पत्नी की मदद से उसके विरुद्ध साजिश की और कैसे उसको मरवाया गया। राजा का लड़का बहादुर था। उसने मौका पाकर अजबल को मारकर अपने पिता की हत्या का बदला लिया।"

धीरमति ने नवद्योत से कहा- "वह बड़ा भाग्यवान है। न जाने मैं उन लोगों

से बदला ले सकूँगा कि नहीं जो मेरी माँ से शादी करने के लिए हमारे घर धरना दिये हुए है।"

"हाँ बेटा, मैंने भी उन दुष्टों की बारे में सुना है। उनको क्यों बर्दाश्त कर रहे हो? क्या सब तेरे शत्रु ही हैं? अगर बुद्धिमति की तुझ पर कृपा हुई तो तू भी अपने पिता की तरह शत्रुओं का निर्मूल नाश कर सकेगा।" नवद्योत ने धीरमति से कहा।

वे बातें कर रहे थे कि दिन ढल गया। धीरमति अपनी नौका की ओर जाने के लिए उठा। परन्तु नवद्योत ने उसे जाने न दिया। "आज रात रूपधर का लड़का नौका में सोयेगा? क्या हमारा घर नहीं है? बिस्तरे बिछौने नहीं हैं?" कहता वह धीरमति को अपने घर ले गया।

केवल सहन और नाविकों का हाल-चाल जानने के लिए उस समय नौका वापिस चला गया।

अगले दिन, धीरमति ने उठकर स्नान किया। स्नान करके कपड़े बदले। उसको प्रताप की रहने की

जगह ले जाने के लिए एक घोड़ा गाड़ी का इन्तजाम किया गया।

रास्ते में भोजन के लिए आवश्यक वस्तुयें लेकर नवद्योत का एक लड़का भी उसके साथ गाड़ी में बैठा। वे दो दिनों की यात्रा के बाद प्रताप के देश में सकुशल पहुँचे।

ठीक उसी समय प्रताप अपनी लड़की का वज्रकाय के लड़के के साथ विवाह कर रहा था। उस विवाह के लिए वहाँ बहुत से लोग आये हुए थे। एक बड़े मण्डप में विनोद और मनोरञ्जन का कार्यक्रम चल रहा था। इतने में प्रताप के अङ्गरक्षक ने आकर कहा- "महाराज!

कोई दो युवक गाड़ी में आये हैं। क्या उन्हें अन्दर लाऊँ या उन्हें कहीं और जाने के लिए कहूँ ?"

प्रताप ने झुञ्झलाकर कहा-"मुझे नहीं मालुम था कि तुम इतने मूर्ख हो। हम परदेश में जब दर दर भटका करते थे तो हमने कितनी बार दूसरों से आतिथ्य नहीं माँगा? तुरन्त जाकर उन युवकों को भोजन के लिए बुलाओ।"

थोड़ी देर बाद धीरमति और उसका साथी मण्डप में आये और आश्चर्य से चारों और देखने लगे। वहाँ उन्हें सूर्य और चान्द चमकते से लगे। नौकरों ने उनको ले जाकर स्नान करवाया, कपड़े दिये। उनका सत्कार किया और उनको लाकर ठीक प्रताप के पास भोजन के लिए बिठा दिया।

प्रताप ने उनसे कहा-"तुम तो राजकुमार दिखाई देते हो। मामूली आदमी नजर नहीं आते। पहले भोजन कीजिये। फिर बताना कि आप कौन हैं और किस काम पर आये हैं।"

भोजन करने के बाद धीरमति ने अपने साथी के कान में कहा- "देखा, यहाँ

कितना काँसा, चान्दी, सोना, हाथी का दान्त वगैरह है!" यह बात प्रताप के कान में भी पड़ी।

"मैंने यह सम्पदा अनेक देशों में घूम फिर कर इकट्ठी की है। ट्रोय नगर के दीवारों के आगे मेरे कितने ही सैनिक मारे गये हैं। अगर वे जीवित रहते और ये सम्पदा न भी होती तो भी मैं अधिक सुखी होता। मैं उनके लिए कभी कभी रोता हूँ। पर सबसे अधिक में रूपधर को ही याद करके रोता हूँ। जब कभी रात में वह याद आता है तो सो नहीं पाता हूँ। जब मेरी ही यही हालत है तो उसके वृद्ध पिता, पत्नी और लड़का न जाने कितना रूपधर के लिए रोते होंगे?" प्रताप ने कहा।

यह सुनते ही धीरति अपना दुख न रोक सका। जब वह आँखें पोंछ रहा था तब भुवनसुन्दरी वहाँ आई।

श्रीरमति को देखते ही उसने पूछा- "जाने यह लड़का कौन है, पर हूवहू रूपधर जैसा ही है।"

"हाँ, ठीक कहती हो।" प्रताप ने धीरमति की ओर देखते हुए कहा।

नवद्योत के लड़के ने प्रताप से कहा-"महाराज! आपने ठीक ही कहा है। यह रूपधर का लड़का ही है। रूपधर के न होने के कारण उसके घर में बुरी हालत हो रही है। वह बड़ी मुसीबत में है। आप शायद इसको कोई सलाह, मदद दे सकें, यह सोच कर मेरे पिता जी ने मुझे इसके साथ आपके पास भेजा है।"

"रूपधर के लड़के का मेरे घर आना कितना विचित्र है।" प्रताप ने कहा। वे रूपघर के बारे में उसके बाद बहुत देर तक बातें करते रहे। रूपघर का अपने बदन पर जबर्दस्त धाव कर, ग्रीक शिबिर से मागे हुए गुलाम के रूप में ट्रीय नगर में आना और उसका उसको पहचानना आदि के बारे में, तब भुवनसुन्दरी ने बताया।

जब वे सब काठ के घोड़े में बैठे थे, तब भुवनसुन्दरी का एक एक का नाम लेकर पुकारना और जब उनमें से कुछ बाहर कूदने को तैयार थे तब रूपधर ने जो वृत्तान्त बताया था, वह भी प्रताप ने विस्तार पूर्वक सुनाया।

आखिर धीरमति ने कहा-"महाराज! मैं आपके पास अपने पिता के बारे में जानकारी पाने के लिए आया हूँ अगर आप कुछ जानते हो तो बिना छुपाये कृपया बताइये।" उसने कहा।

"जो कुछ मैं जानता हूँ, बताता हूँ, सुनो। जब में मिश्र में रह गया था तब मुझे समुद्रों में रहनेवाला बूढ़ा दिखाई दिया। उसने मुझे बहुतों के विषय में बताया। उसी से पता लगा कि रूपधर अपने सैनिकों को खो बैठा था और किसी द्वीप में सम्मोहिनी के जाल में पड़ा हुआ था।"

(अभी और है)

दिल्ली के बादशाहों में अलाउद्दीन खिलजी भी एक था। वह बड़ा दुष्ट था। उसमें दो विचित्र इच्छायें थी। एक संसार को जीतने की इच्छा और दूसरी खूबसूरत स्त्रियों को अपनी पत्नी बनाने की इच्छा। अलाउद्दीन जब राजपूताना को जीत रहा था तब उसे पद्मिनी के सौन्दर्य के बारे में मालूम हुआ। तुरत पद्मिनी को पाने की उसकी इच्छा हुई।

मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ थी। मेवाड़ का उन दिनों राजा लकुमसिंह था। क्योंकि वह बहुत छोटा था इसलिए उसका चाचा, भीमसिंह उसके बदले राज्य-कार्य कर रहा था। पद्मिनी भीमसिंह की पत्नी थी। उसका जन्म स्थान सिंहल देश था। सौन्दर्य में उससे बढ़कर उस समय कोई न था।

अलाउद्दीन को तो यह घमण्ड था कि वह दूसरा सिकन्दर था। उसने पद्मिनी को अपने पराक्रम से जीतना चाहा। इसलिए उसने चित्तौड़ के किले पर धावा बोल दिया। किला पहाड़ की चोटी पर था। उसको जीतना आसान काम न था। अलाउद्दीन की सेना ने किला घेर तो लिया पर वे चित्तौड़ के किले को जीत न पाये।

राजपूत चित्तौड़ के किले की जी-जान से रक्षा कर रहे थे। अलाउद्दीन भी अपनी सेना भेजता जाता था। परन्तु उसकी सेना निरन्तर मार दी जाती, हरा दी जाती। अलाउद्दीन को निराशा होने लगी। यह बिना जाने कि पद्मिनी वस्तुतः सुन्दर थी कि नहीं, वह अपने सेना को उसके लिए बलि दे रहा था। अलाउद्दीन चित्तौड़ का घेरा छोड़कर जब वापस जानेवाला था तो भीमसिंह ने

उसके पास सन्धि के लिए दूत भेजे। उसने कहलवाया कि यदि वह घेरा छोड़कर ला गया तो उसे वह बहुत-सा सोना देगा। घेरे के कारण चित्तौड़ के लोग रह तरह के कष्ट झेल रहे थे। उन्हें जाने को भी नहीं मिल रहा था। इसीलिए भीमसिंह सन्धि करना चाहता था।

परन्तु यह सुनते ही अलाउद्दीन ऐंठ बैठा। उसने सोचा कि बिना पद्मिनी को लिए वह वापिस न जायेगा। परन्तु उसने यह दूत से न कहा। "कहते हैं कि इस संसार में पद्मिनी से कोई अधिक सुन्दर नहीं है। अगर उसे मुझे एक बार दिखाया गया तो मैं सन्धि के लिए तैयार हूँ। यह भीमसिंह से कहो।" उसने दूत से कहा।

यह सुनते ही चित्तौड़ के राजपूतों का खून खौल उठा। परन्तु उन्होंने भी जनहित के लिए अलाउद्दीन की इच्छा को पूरा करने का निश्चय किया। "कल अगर तुम अकेले, निहत्थे चित्तौड़ के किले में आये तो तुम्हारी इच्छा पूरी कर दी जायेगी।" उन्होंने अलाउद्दीन के पास जवाब भिजवाया। अलाउद्दीन जानता था कि राजपूत वचन देकर मुकरते न थे। इसलिए वह

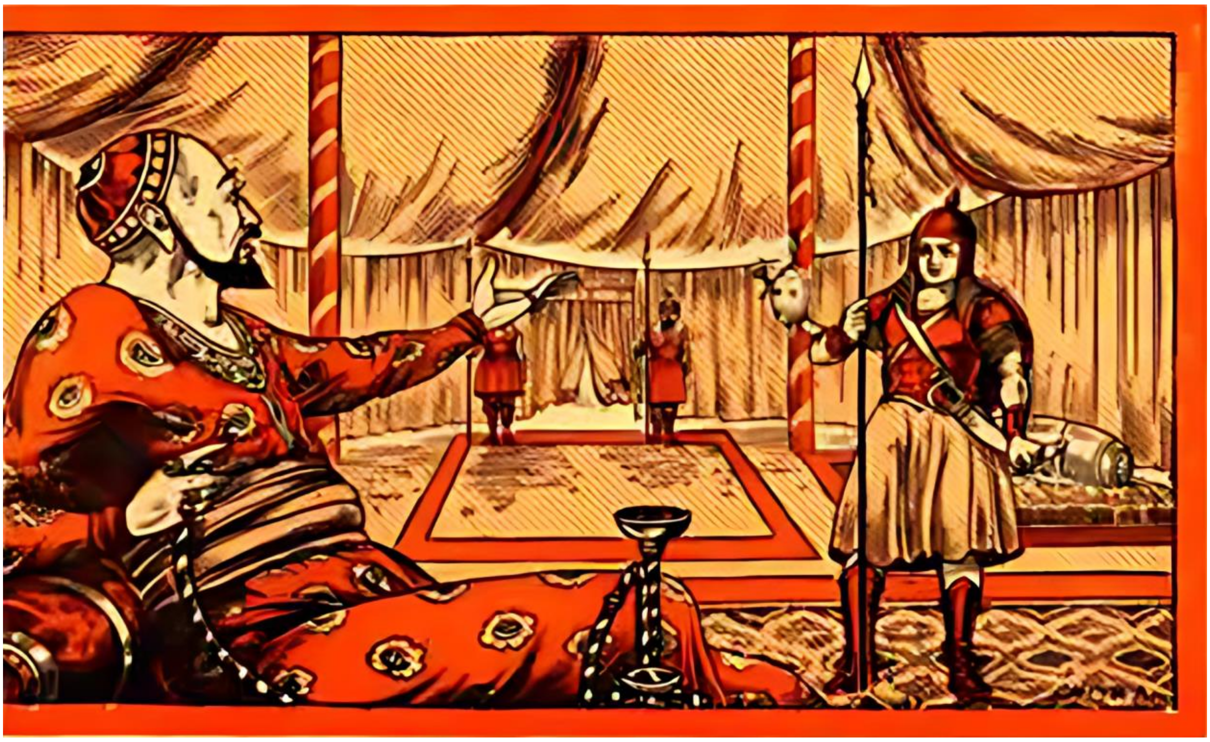

अकेला निहत्था किले में गया। परन्तु उसके मन में एक नीच ख़याल आया। वह धोखे से पद्मिनी को भगा ले जाने की सोचने लगा।

पहरेदारों ने बादशाह को सगौरव किले के अन्दर जाने दिया। भीमसिंह ने उसका स्वागत किया। सुशोभित दरबार में अलाउद्दीन ने पद्मिनी को देखा। परन्तु वह पद्मिनी को प्रत्यक्ष न देख सका। शीशे में उसने पद्मिनी का प्रतिबिम्ब देखा। एक शीशे में ही नहीं, बारह शीशों में बारह बार प्रतिबिम्बित पद्मिनी के मुँह को उसने देखा। वह जान गया कि दुनियाँ में पद्मिनी से अधिक कोई सुन्दर स्त्री न थी।

शीशे में जब अलाउद्दीन टकटकी लगाये पद्मिनी को देख रहा था तो राजपूतों का दिल गुस्से से दहक रहा था।

आखिर अलाउद्दीन की नजर एक तरफ मुड़ी। वह जाने के लिए उठा। भीमसिंह उसको छोड़ने के लिए उसके साथ गया। पद्मिनी अपमान के कारण रो रही थी और अन्तःपुर की स्त्रियाँ उसको आश्वासन दे रही थीं।

अलाउद्दीन जब पहाड़ से उतर रहा था, तो उसने भीमसिंह के सामने पद्मिनी की खूब प्रशंसा की। अगर भीमसिंह वचनबद्ध न होता तो उस नीच को आसानी से गला घोंटकर मार सकता था।

दोनों मुसलमानों के तम्बुओं के पास पहुँचे। बादशाह की, पद्मिनी को अपनी पत्नी बनाने की इच्छा और भी प्रबल हो उठी। उसने अपने सिपाहियों को इशारा किया। तुरन्त उन्होंने भीमसिंह पर हमला किया और उसको बाँधकर एक तम्बू में कैद कर दिया।

इस अत्याचार के बारे में जब राजपूतों को खबर मिली तो वे हैरान रह गये। उन्होंने अलाउद्दीन के पास खबर भेजी कि वह उनके राजा को तुरत छोड़ दे। अलाउद्दीन ने खबर भिजवाई कि यदि पद्मिनी उसके पास भेजी गई तो वह उनके राजा को वापिस भेज देगा।

एक सप्ताह तक राजपूत सोचते रहे। लकुम सिंह तो बच्चा था। भीमसिंह के कैद किये जाने पर चित्तौड़ की प्रजा का कोई अच्छा सरदार न था। अब सब कामों के लिए पद्मिनी ही जिम्मेवार थी। उसने

सबको बुलाकर सभा की और अपने एक सम्बन्धी गोरासिंह को सेनापति नियुक्त किया। भीमसिंह की रक्षा के लिए भी उसने एक उपाय सुझाया। सभासद भी उससे सहमत थे।

चित्तौड़ से गोरासिंह दूत बनकर बादशाह के पास गया। "बादशाह, अगर आपने हमारे राजा को छोड़ दिया तो पद्मिनी आपके पास आयेंगी, परन्तु उनके साथ कई दासियाँ भी आयेंगी और आपको उनके आने की अनुमति देनी चाहिये।"

बादशाह की प्रसन्नता की सीमा न रही। "पद्मिनी अपने पद के अनुरुप शान मान से आ सकती है। मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु उन्हें तुरन्त आना होगा।"

"रानी के साथ क्या कुछ सिपाही भी आ सकते हैं?" गोरासिंह ने पूछा।

"नहीं, नहीं, यह विवाह है। युद्ध नहीं है।" अलाउद्दीन ने हँसते हुए कहा। गोरासिंह वापिस चला गया। बादशाह ने अपने सैनिकों को बुलाकर कहा- "आज का दिन हमारे लिए

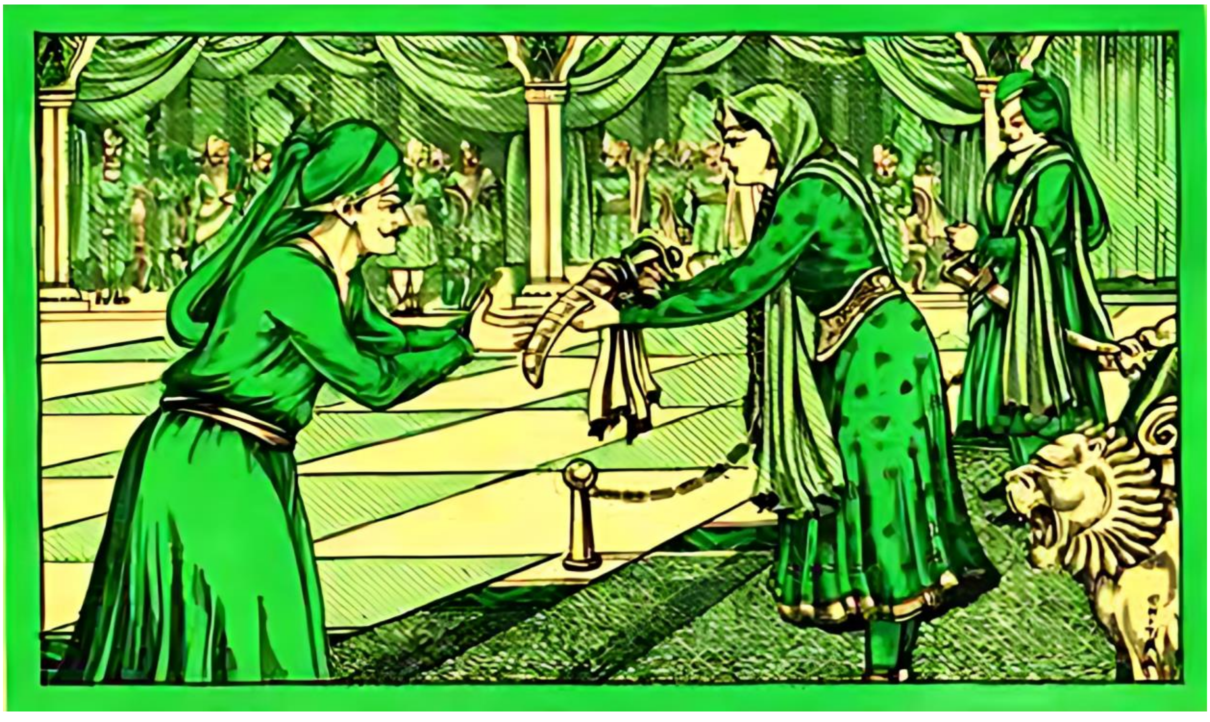

त्यौहार है। तुम जैसे चाहे, इसे मनाओ।" जब अलाउद्दीन की छावनी में मजे उड़ाये जा रहे थे तब सात सौ पालकियाँ पहाड़ से नीचे आई। एक एक पालकी को छः छः आदमी ढो रहे थे।

बादशाह ने अपने अच्छे कपड़े पहने। अपने तम्बू को भी खूब सजाया। यह पद्मिनी की प्रतीक्षा करने लगा। पालकियाँ आकर उसके तम्बू के सामने रुकी। गोरासिंह ने अलाउद्दीन से कहा- "पद्मिनी आ गई हैं। अब आप कृपया राजा को छोड़िये।"

"अभी नहीं। पहिले मुझे पद्मिनी से शादी कर लेने दो।" अलाउद्दीन ने कहा।

"यह बात है तो पद्मिनी को पहले अपने पति को तलाक देने दीजिये।" गोरासिंह ने कहा। बादशाह को बहुत झिझक के बाद यह भी मानना पड़ा।

पद्मिनी के भीमसिंह के तम्बू में पैर रखते ही, भीमसिंह ने आश्चर्य से पूछा-"तुम!"

"चिल्लाइये मत। यह लीजिये तलवार। बाहर दो घोड़े तैयार हैं। आइये भाग निकलें।" पद्मिनी ने कहा।

पहरेदार अभी धोखा ताड़ नहीं पाये थे कि भीमसिंह और पद्मिनी तम्बू से बाहर निकले और घोड़ों पर सवार होकर चित्तौड़ की ओर भागने लगे। ठीक उसी समय पालकियों में से सशस्त्र योद्धा बाहर निकले और उन्होंने मुसलमानों पर हमला बोल दिया। उन पालकियों को ढोनेवाले भी सैनिक थे। करीब पाँच हजार राजपूत और मुसलमानों में घोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में राजपूत बहुत बड़ी संख्या में मारे गये। परन्तु अलाउद्दीन की बहुत-सी सेना नष्ट हुई। वह क्रोध और निराशा में घेरा उठाकर, दिल्ली वापिस चला गया।

सिंहल देश में एक व्यापारी रहा करता था। उसने देश विदेशों से व्यापार करके बहुत-सा रुपया कमाया था। जब वह मृत्यु शैय्या पर था तो उसने अपने पुत्र जयपाल को बुलाकर अपने व्यापार को सौंपते हुए कहा-"बेटा, तुम भी मेरी तरह देश विदेशों से व्यापार करना। पर भूलकर भी बञ्चक महापट्टनं न जाना।"

पिता के गुजर जाने के बाद जयपाल अपनी चार नौकाओं को लेकर व्यापार करने लगा। उसकी यह इच्छा हुई कि देखा जाय कि बञ्चक महापट्टनं में जाने से क्या होता है। यह अक्लमन्द था। अगर कोई उसे धोखा देता तो वह भी बढ़कर धोखा दे सकता था। दहले पर नहला मार सकता था। इसलिए वह अपनी चार नौकायें लेकर उस शहर में पहुँचा।

नौकाओं को बन्दरगाह में छोड़कर अपना धनुष बाण लेकर जयपाल समुद्र के किनारे शिकार खेलने गया। उसे एक जगह सारस दिखाई दिया। वह समुद्र में मछली पकड़ रहा था। जयपाल ने धनुष पर बाण चढ़ाकर सारस पर मारा। तुरन्त वह मरकर समुद्र में गिर गया।

पास ही एक मछियारा मछली पकड़ रहा था। उसने जयपाल के पास भागकर पूछा-"तुम कौन हो? तुमने मेरे पिता को मारा है। मैं तुम्हारी राजा से शिकायत करूँगा।"

"यह सारस क्या तुम्हारा पिता है?" जयपाल ने आश्चर्य से पूछा।

"हाँ, मेरे पहले जन्म में यह मेरा पिता था। अब सारस का जन्म लेकर, मछली पकड़ने में मेरी मदद कर रहा है।" मछियारे ने कहा।

जयपाल को गुस्सा आया। "जा वे जा, जहाँ चाहे तू शिकायत कर।" उसने मछियारे को डराया धमकाया।

फिर वह जब शहर में चल रहा था तो एक आदमी ने सामने आकर कहा-"अरे भाई, कितने दिनों बाद दिखाई दिये। बहुत साल पहले मैंने अपना दायाँ कान तुम्हारे पिता के पास गिरवी रखकर दस रुपये उधार लिये थे। वह दस रुपये चुका देता हूँ। तुम मेरा कान मुझे वापिस कर दो।"

जयपाल ने हैरान होकर उस आदमी की ओर देखा। उसके सिर्फ बायाँ कान ही था। दायाँ कान न था। "मेरे पिताजी ने तेरे कान के बारे में मुझसे कुछ न कहा था। अगर लिया होता तो कहते।" जयपाल ने उस आदमी से कहा।

"अगर तुमने मुझे मेरा कान न दिया तो मैं तुम्हारी शिकायत करूँगा।" कहकर वह आदमी चला गया।

जयपाल थोड़ी दूर और गया तो उसको एक स्त्री दिखाई दी। "देखो बेटा, सोलह साल पहले तुम्हारे पिता यहाँ आये थे। उन्होंने मुझसे शादी की और फिर मुझे छोड़कर चले गये। वचन दिया था

कि मेरे गुजारे के लिए दस हज़ार रुपये देंगे। वह रुपया तुम देते हो कि नहीं? नहीं तो मैं शिकायत करूँगी।"

जयपाल यह धान्धली न सह सका। उसने कहा-"जा, मैं तुझे दमड़ी भी न दूँगा।" वह फिर अपनी नौकाओं के पास चला गया। उसे बन्दरगाह के पास एक नाई दिखाई दिया। उसने कहा-"हुक्म हो तो हजामत बनाऊँ?"

"क्या लोगे?" जयपाल ने पूछा।

"मुझे सन्तुष्ट कीजिये महाराज।" नाई ने कहा।

जयपाल मान गया। उसने उससे हजामत करवाई और एक रुपया देना चाहा। नाई ने लेने से इनकार कर दिया। पाँच रुपये भी उसने लेने से मना कर दिया। जयपाल को गुस्सा आ गया। "जा, मैं तुझे कुछ नहीं दूँगा। जा तू भी जहाँ चाहे शिकायत कर।"

मछियारा, बिना कान का आदमी, स्त्री और नाई, चारों राजदरबार में गये और उन्होंने जयपाल के विरुद्ध फरियाद की। जयपाल को दरबार में बुलाया गया। सुनवाई शुरू हो गई।

पहले पहल मछियारे ने राजा से कहा-"महाराज, मेरे पिता मर कर सारस के रूप में पैदा हुये और वे मछली पकड़ने में मेरी सहायता कर रहे थे और इसने उनको मार दिया और इस तरह मेरा नुक्सान किया।"

राजा ने जयपाल की ओर मुड़ कर कहा-"इस मछियारे को हरजाने में एक नौका दो।"

फिर बिना कान के आदमी ने शिकायत की-"महाराज, मैंने इस व्यक्ति के पिता के पास बायाँ कान गिरवी रखकर दस रुपये उधार लिए थे। मैंने कहा कि मैं उधार वापिस कर दूँगा, मेरे कान दे दो। तो यह कहता है कि जा तू जहाँ चाहे शिकायत कर ले।"

राजा ने फैसला दिया कि जयपाल उसको भी एक नौका हरजाने में दे।

फिर स्त्री ने जयपाल की शिकायत की। उसको भी राजा ने हरजाने में जयपाल से एक नौका दिलवाई।

आखिर नाई ने शिकायत की-"महाराज, इन्होंने कहा था कि मुझ से हजामत करवाकर मुझे सन्तुष्ट करेंगे। अगर आप इनकी एक नौका दिलवायें तो मैं भी सन्तुष्ट हो जाऊँगा। इससे कम में किसी चीज़ से भी, किसी हालत में भी सन्तुष्ट न होऊँगा।"

"जो नाई कह रहा है, वह ठीक ही हैं। इसलिए जयपाल को इसे भी एक नौका देनी होगी।" राजा ने झट फैसला दे दिया।

इन फरियादों का फैसला सुनकर जयपाल हैरान रह गया। वह भलीभांति जान गया कि उस नगर को बञ्चक महापट्टनं क्यों कहते थे और क्यों उसके पिता ने वहाँ जाने के लिए मना किया था। सिवाय गले के हार

के उसकी सारी सम्पत्ति चली गई थी। "अब क्या किया जाय? यहाँ से बाहर कैसे निकला जाय?" वह यह सोच रहा था कि राजदरबार में राजा का दस वर्ष का लड़का आया।

तुरत जयपाल ने अपने गले का हार राजकुमार के गले में डाल दिया। दरबार में सबने करतल ध्वनि करके हर्ष प्रकट किया। राजा ने भी अपने लड़के को पास बुलाकर उसके गले में हार देखा। वह भी सन्तुष्ट हुआ।

जयपाल ने दरबारियों की ओर मुड़कर कहा-"क्या दरबार में कोई ऐसा है, जो मेरे राजकुमार को हार देने पर सन्तुष्ट न हुआ हो?"

"कोई नहीं है, हम सब को सन्तोष है।" सब चिल्लाये।

जयपाल ने नाई की ओर मुड़कर पूछा-"क्यों भाई, क्या तुम भी सन्तुष्ट हो?"

नाई यह कहे बगैर रह न सका कि वह भी सन्तुष्ट था।

जयपाल ने राजा की ओर मुड़कर कहा-"महाराज! मैंने नाई को सन्तुष्ट

कर दिया है। इसलिए उसे मेरी नौका देने की जरूरत नहीं है।"

"हाँ, जरूरत नहीं है।" राजा ने कहा।

फिर जयपाल ने स्त्री से पूछा-"तुम्हें गुजारे के बारे में एक बात बतानी होगी। मैं गुजारे के लिये तुम्हें पैसा दूँगा। पर एक कठिनाई है। हमारे देश की रीति के अनुसार पत्नी को पति के साथ सती होना पड़ता है। दुर्भाग्य से मेरे पिता एक वर्ष पहले मर गये। इसलिये अगर एक चिता जला कर तुम सती हो

गई तो तुम्हारे उत्तराधिकारियों को मैं गुजारा दूँगा।"

"मैं कभी भी जबर्दस्ती नहीं मरूँगी।" उस स्त्री ने कहा। जयपाल ने तब राजा को कहा- "महाराज! मैं नहीं समझता कि मुझे इन्हें कोई हरजाना देना होगा।" राजा भी उससे सहमत हो गया।

उसके बाद जयपाल ने बिना कान के आदमी से कहा-"तुमको कान देने में भी कोई आपत्ति नहीं है। मेरे पिता के जमाने में कितनों ही ने तुम्हारी तरह अपने कान गिरवी रखकर रुपया उधार लिया था। उनमें तुम्हारा कान पहचानना मुश्किल है। इसलिये अभी तुमने अपना बायाँ कान काटकर दिया तो उससे मिलाकर, तुम्हारा दायाँ कान ढूँढ़कर तुम्हारे पास भेज दूँगा।"

इसके लिये बिना कान का आदमी न माना। राजा ने कहा कि उसे भी हरजाना देने की ज़रूरत न थी।

फिर जयपाल ने राजा से कहा- "महाराज! मेरे पिता मरने के बाद मछली के रूप में पैदा हुये और वे उस रूप में मेरी नौका चलाने में मेरी सहायता कर रहे थे कि इस मछियारे के सारस पिता ने उसे निगल लिया। यदि मछली के रूप में वे न पैदा होते तो मैं यहाँ आता ही न।"

राजा यह सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने कहा कि मछियारे को भी कोई हर जाना देने की ज़रूरत न थी। उसके बाद जयपाल एक दिन राजा का अतिथि बनकर रहा। उसको राजा ने कई उपहार भी दिये। वह अपनी नौकायें लेकर चला गया।

Regd. No. M. 5432

रूपघर की यात्राएँ